प्रबन्ध व्यवस्था में शिथिलता घातक

देश में ग्रामोद्योगों के उत्थान में खादी और ग्रामोद्योग कमीशन की भूमिका सराहनीय रही है। घानी तेल और हाथ कागज से लेकर साबुन, चूने और कत्थे के निर्माण तक में उत्पादन और रोजगार दोनों की दृष्टि से कमीशन ने अप्रैल, 1957 में अपनी स्थापना से लेकर बराबर अच्छा काम किया है। कमीशन के अध्यक्ष के अनुसार पिछले वर्ष खादी और विभिन्न ग्रामोद्योगों से करीब 30 लाख लोगों को पूर्ण या अंशकालिक रोजगार मिला, 98 करोड़ रु० की खादी का उत्पादन हुआ और ग्रामोद्योगों के अन्तर्गत 312 करोड़ रु० मूल्य के सामान का उत्पादन हुआ । ये आंकड़े काफी प्रभावशाली हैं।

कमीशन द्वारा स्थापित कार्यकारी दल ने छठी योजना के लिए जो कार्यक्रम तैयार किए हैं, उनके अन्तर्गत पहले से दुगने अर्थात 60 लाख लोगों को आंशिक या पूर्णकालिक रोजगार दिलाने की योजना है और उन पर 1800 करोड़ रु० के खर्च का प्रावधान है। इसमें से 600 करोड़ रु० की व्यवस्था बैंक वित्त से करने का प्रस्ताव है। अनुमान है कि योजना आयोग इनमें से अधिकांश प्रस्तावों को स्वीकृति दे देगा।

लेकिन चिन्ता की बात यह है कि कमीशन के अध्यक्ष के अनुसार उत्तर के राज्यों के खादी बोर्डों की प्रबन्ध व्यवस्था दक्षिण के राज्यों की तुलना में 'कमजोर' है, विशेषकर उत्तरप्रदेश का खादी बोर्ड ठीक तरह से काम नहीं कर रहा है। स्पष्ट है कि अगर खादी बोर्डों का संचालन ठीक ढंग से नहीं होगा तो निश्चय ही ग्रामोद्योगों पर इसका विपरीत प्रभाव पड़ेगा।

ऐसे समय में जब भयंकर गरीबी और बड़े पैमाने पर बेरोजगारी हमारे देश के लिए विषम समस्या बनी हुई है, खादी बोर्डों के कुप्रबन्ध का समाचार निसन्देह हतोत्साह करने वाला है। इससे हमें सजग हो जाना चाहिए।

एक मोटे अनुमान के अनुसार देश के करीब ढाई करोड़ ग्रामीण परिवार नितान्त निर्धनता का जीवन व्यतीत कर रहे हैं। यह भी एक कटु सत्य है कि करीब साढ़े तीन करोड़ ग्रामीण परिवारों के पास ढाई एकड़ या उससे भी कम जमीन है। इन आंकड़ों से सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है कि देश में ग्रामीण गरीबी और बेरोजगारी या अल्प-रोजगारी की समस्या कितनी प्रबल है। केन्द्रीय सरकार ने छोटे और सीमान्त किसानों, भूमिहीन खेत मजदूरों, ग्रामीण कारीगरों आदि कमजोर ग्रामीण वर्गों के उत्थान के लिए लघु किसान विकास एजेन्सी, सूखा क्षेत्र कार्यक्रम, कमांड क्षेत्र विकास कार्यक्रम, समग्र ग्रामीण विकास कार्यक्रम, ग्रामीण युवकों के लिए स्व-रोजगार का कार्यक्रम आदि अनेक कार्यक्रम चलाए हैं। 'काम के बदले अनाज' कार्यक्रम को और अधिक उपयोगी बनाने के लिए राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम का रूप दिया जा रहा है। व्यक्ति की बजाय समूचे परिवार को कल्याण का लक्ष्य बनाने का दृष्टिकोण बल पकड़ता जा रहा है।

तात्पर्य यह है कि बड़े पैमाने की समस्या के लिए बड़े पैमाने पर प्रयास किए जा रहे हैं। इन प्रयासों में सफलता इस बात पर निर्भर करती है कि इनका संचालन कैसे होता है, विविध कार्यक्रमों में समन्वय किस प्रकार रखा जाता है। कुप्रबन्ध, शिथिल प्रबन्ध या उदासीनता से सब सद्प्रयास निरर्थक हो सकते हैं, चाहे वे खादी और ग्रामोद्योग कमीशन के हों या सरकार के। अत: हर स्तर पर निष्ठापूर्वक कार्यक्रमों के क्रियान्वयन को सुचारु करना होगा, प्रबन्ध व्यवस्था को मजबूत बनाना होगा, तभी हम देश से गरीबी और बेरोजगारी को दूर करने के अपने लक्ष्य में सफल हो सकते हैं। □

मज़दूर मंज़िल

'कुरुक्षेत्र' के लिए मौलिक लेख, कहानी, एकांकी, कविता, संस्मरण, हास्य-व्यंग्य चित्र आदि भेजिए।

●

अस्वीकृत रचनाओं की वापसी के लिए टिकट लगा व पता लिखा लिफाफा साथ आना आवश्यक है।

●

'कुरुक्षेत्र' की एजेन्सी लेने, ग्राहक बनने, पता बदलने या अंक न मिलने की शिकायत बिजनेस मैनेजर, प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नई दिल्ली-110001 से कीजिए।

सम्पादकीय पत्र-व्यवहार : सम्पादक कुरुक्षेत्र (हिन्दी), ग्रामीण पुनर्निर्माण मन्त्रालय, 467, कृषि भवन, नई दिल्ली के पते पर करें।

●

एक प्रति 1 रु० : वार्षिक चंदा 10 रु०

●

दूरभाष : 382406

सम्पादक : देवेन्द्र भारद्वाज

उपसम्पादक : कु० शशि चावला

आवरण पृष्ठ : परमार

कुरुक्षेत्र

वर्ष 26 कार्तिक–अग्रहायण 1902 अंक 1

इस अंक में : **पृष्ठ संख्या**

नेहरूजी और ग्रामीण विकास — 2
जगदीश प्रसाद चतुर्वेदी

ग्रामीण औद्योगीकरण क्यों जरूरी — 5
डा० बद्री विशाल त्रिपाठी

मिश्रित अर्थव्यवस्था के प्रणेता नेहरूजी — 10
दीनानाथ दुबे

खुशहाली की राह छोटा परिवार — 12
शरद द्विवेदी

महिला रोजगार की समस्या और उसका समाधान — 14
अमरनाथ राय

ग्रामीण महिलाओं की समस्याएं — 16
विमला उपाध्याय

मध्य प्रदेश में सहकारी कृषि साख — 18
सरदार सिंह पवार

भूमि को भी रक्षा की जरूरत है — 20
बी० बी० वोहरा

सौराष्ट्र की प्राण वायु : मूंगफली तेल उद्योग — 26
आर० जयन्त

स्थायी स्तम्भ

केन्द्र के समाचार : कहानी : कविता : साहित्य समीक्षा आदि।

नेहरूजी और ग्रामीण विकास

—जगदीश प्रसाद चतुर्वेदी—

जिन जवाहरलाल नेहरू ने अपनी राजनीति का प्रारम्भ इलाहाबाद, रायबरेली और प्रतापगढ़ के ग्रामीण आंदोलन में शुरू किया हो, वे जब सत्तारूढ़ हुए तो यह स्वाभाविक ही था कि ग्रामीण विकास की ओर उनका ध्यान जाता। आज भारत में जो कृषि का विकास हो रहा है उसकी आधारशिला अगर कहीं देखने को मिलेगी तो वह नेहरूजी के काल में मिलती है। 14 अगस्त, 1947 की मध्यरात्रि को पद ग्रहण करते हुए यानी सत्ता संभालते हुए पं० जवाहरलाल नेहरू ने भरी विधान सभा में जो भाषण दिया था उसमें साफ-साफ कहा था कि हमारा भविष्य आराम करने का नहीं है बल्कि हमने अभी तक जो वचन भरे हैं या आज जो भरने जा रहे हैं उन्हें पूरा करने के लिए निरन्तर प्रयास करना होगा। भारत की सेवा का अर्थ है उन करोड़ों लोगों की सेवा करना जो दुखी हैं। इसका अर्थ होता है गरीबी, अशिक्षा और रोगों को दूर करना तथा अवसर की असमानता को समाप्त करना और उसी रात यानी दूसरे दिन जब उन्होंने आकाशवाणी से प्रसारण किया तो उन्होंने कहा कि "भविष्य हमें संकेत कर रहा है, हम किधर जाएंगे और हमारे क्या प्रयास होंगे? हम साधारण जन को स्वाधीनता और अवसर दिलाएंगे। भारत के किसानों और मजदूरों में हम गरीबी, अशिक्षा और रोगों को समाप्त करने के लिए संघर्ष करेंगे।" इस प्रकार जब श्री जवाहर लाल नेहरू भारत के प्रधान मंत्री हुए तो भारत के किसानों का उद्धार उनके हृदय में सबसे पहले था। उनके नेतृत्व में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने जमींदारी प्रथा का उन्मूलन करने और भूमि सुधारों की श्रृंखला प्रारंभ करने का संकल्प किया और ये संकल्प पारित किए गए। चाहे आवडी का समाजवादी ढंग के समाज का प्रस्ताव हो या नागपुर कांग्रेस महासमिति का यह निर्णय हो कि सरकारी पद्धति पर खेती की जाए, नेहरूजी के समय में कृषि विकास के लिए एक निश्चित रूपरेखा थी। सबसे पहले उनका यह विश्वास था कि जिस प्रकार की खेती भारत में होती है उसमें किसान का शोषण होता है और परिणाम यह होता है कि जो खेती जोतनेवाला है वह उस पर न पैसा लगा सकता है और न लगाना चाहता है क्योंकि उसके कोई अधिकार नहीं हैं। परिणामस्वरूप खेती की उपज कम होती है और जो होता है उसका भी उचित मूल्य नहीं मिलता है। नेहरूजी के जमाने में देश के सारे किसानों को भूमि का स्वामित्व मिला और जिनके पास अपनी भूमि नहीं थी उनको यह आश्वासन मिला कि जब भूमि की हदबंदी हो जाएगी यानी कुछ सीमाएं निश्चित हो जाएंगी बाकी धरती उन लोगों को मिलेगी जिनके पास भूमि नहीं है। इस सिलसिले में कानून बनाए गए, उनके परिपालन पर जोर दिया गया और हवा बदली।

नेहरूजी का दूसरा योगदान यह था कि उन्होंने कृषि, सिंचाई ग्रामीण विकास इन सभी चीजों को योजनाबद्ध कर दिया और केन्द्र तथा राज्यों ने इन पर पर्याप्त पूंजी लगाई।

नेहरूजी के बड़े से बड़े आलोचक भी मानते हैं कि प्रथम पंचवर्षीय योजना में कृषि को प्राथमिकता दी गई और यह तब था जबकि उस समय शरणार्थियों के पुनर्वास की बड़ी विषम समस्या थी। रेलें, सड़कें, बन्दरगाह और सेना सभी विभाजन के कारण हुई क्षति की पूर्ति के लिए अधिकाधिक धन की मांग कर रहे थे। प्रथम पंचवर्षीय योजना में 23 अरब 78 करोड़ रुपये का प्रावधान किया गया था। इसमें 354 करोड़ रु० कृषि और सामुदायिक विकास के लिए था, 647 करोड़ रु० सिंचाई तथा बिजली की योजनाओं के लिए था और 49 करोड़ रु० ग्रामीण तथा लघु उद्योगों के लिए। वैसे जो रेलें बनीं, सड़कें बनीं, शिक्षा का प्रसार हुआ, स्वास्थ्य की व्यवस्था हुई, पिछड़ी जातियों या अनुसूचित जातियों को जो सहायता दी गई उस सब का ग्रामीणों के जीवन पर निश्चित प्रभाव पड़ा। परन्तु लगभग 34 प्रतिशत धन केवल विशुद्ध ग्रामीण विकास के लिए निर्धारित कर दिया गया और इसी का परिणाम था कि हमारे राष्ट्र में ऐसी योजनाएं संभव हुईं जिनसे आज तक भारत के देहात लाभान्वित हैं।

किसान के लिए खेती सबसे महत्वपूर्ण है। प्रथम पंचवर्षीय योजना में सिंचाई और बिजली के लिए 29 प्रतिशत धन आवंटित किया गया और परिणाम हुआ भाखड़ा-नंगल और हीराकुड जैसे विशाल बांध तैयार हुए जो आज भी अपनी ऊंचाई और लम्बाई में न केवल हमारे राष्ट्र के वरन संसार के बड़े-बड़े बांधों में गिने जाते हैं। भाखड़ा-नंगल ने तो नेहरूजी को इतनी प्रभावित किया कि योजना प्रारम्भ होने से पहले ही उसके ऊपर 25 करोड़ रुपया लगा दिया गया। हीराकुड बांध ने 6,72,000 एकड़ भूमि को सिंचाई प्रदान की और भाखड़ा-नंगल परियोजना ने पंजाब, हरियाणा और राजस्थान में 36,00,000 एकड़ भूमि को सिंचाई दी। यही वह समय था जब बिहार और बंगाल में दामोदर घाटी योजना कार्यान्वित हुई। मध्यप्रदेश में

चम्बल योजना निकली। बिहार में कोसी, उत्तर प्रदेश में रेंड, आंध्र प्रदेश में नागार्जुन सागर और महाराष्ट्र में, जो तब बम्बई कहलाता था, कोयना योजना शुरू हुई। जनवरी, 1953 में मध्यभारत में गांधी सागर बांध पर कार्य प्रारम्भ हुआ और कृष्णा नदी का विशाल नागार्जुन सागर उसी योजना की देन है। छोटी-मोटी योजनाएं बहुत सी बनीं। बम्बई में खाकरपाड़ा माही नहर, घाटप्रवाह नहर, गंगापुर बांध आदि अनेकों योजनाएं बनीं। उत्तर प्रदेश में अनेकों योजनाओं पर कार्य हुआ। मद्रास में भी भावनी, मल्लमपूजा, मैटूर आदि योजनाएं बनीं। पंजाब में भाखड़ा-नंगल के अतिरिक्त हरिके योजना आई और हैदराबाद में तुंगभद्रा और सम्मिलित रूप से मुच्चकुंद बांध पर कार्य हुआ। यहां तक कि जम्मू-कश्मीर में भी 14 सिंचाई योजनाएं चालू की गईं।

खेती के लिए धन दिया गया। अच्छे बीजों का उत्पादन हुआ। खाद बनाने के लिए सिंदरी जैसे कारखाने खड़े किए गए और इन सब कार्यक्रमों से देहातों की रौनक बदलने लगी। जो काम पहली पंचवर्षीय योजना में पूरा नहीं हो सका, वह द्वितीय योजना में पूरा हुआ। कहने को तो द्वितीय पंचवर्षीय योजना में उद्योगों को प्राथमिकता दी गई और भिलाई, दुर्गापुर तथा राउरकेला जैसे बड़े इस्पात कारखानों की परिकल्पना की गई परन्तु यह कहना गलत होगा कि कृषि की उपेक्षा की गई। प्रथम पंचवर्षीय योजना में 2 करोड़ 10 लाख एकड़ अतिरिक्त भूमि में सिंचाई की गई थी। 7 परियोजनाएं ऐसी थीं जिन पर 30 करोड़ से अधिक व्यय आना था। 6 पर 10 से 30 करोड़ रुपये का खर्चा था। 54 पर 1 से लेकर 10 करोड़ तक और इनके अतिरिक्त 200 ऐसी अन्य योजनाएं भी थीं जिनमें से प्रत्येक पर 1 करोड़ रु० व्यय होना था। द्वितीय योजना में जो नई 188 योजनाएं अतिरिक्त सिंचाई देने के लिए चालू की गईं उनमें 10 ऐसी थीं जिनपर खर्च 10 से 30 करोड़ रु० के बीच में था, 42 पर 1 और 10 करोड़ रु० के बीच में था और शेष 136 ऐसी थीं जिनपर 1 करोड़ रु० से कम व्यय होना था, पर इस बार एक बात नई हुई कि 3581 नलकूपों के निर्माण के लिए 20 करोड़ रु० की घोषणा की गई।

प्रथम पंचवर्षीय योजना में ग्रामीण विकास के लिए एक नया कार्यक्रम शुरू किया गया जिसे सामुदायिक विकास और ग्रामीण विस्तार योजना कहते हैं। सामुदायिक विकास का उद्देश्य यह था कि समग्र ग्राम के विकास के लिए प्रयत्न किए जाएं। अक्तूबर, 1952 में महात्मा गांधी की जन्म तिथि के साथ 27388 ग्रामों में जिनमें 1 करोड़ 66 लाख व्यक्ति रहते थे, सामुदायिक विकास योजना प्रारम्भ की गई और यह लक्ष्य रखा गया कि योजनाकाल के समाप्त होते-होते यह योजना 1,20,000 गांवों तक पहुंच जाएगी। सन 1952 में 167 मंडलों में काम हुआ। 1953 में और 1955-56 में 152 ब्लाक और कायम हो गए। इसी के साथ ग्रामीणों को कृषि की ताजा जानकारी देने के लिए राष्ट्रीय विकास सेवा के ब्लाक भी बनाए गए। उनकी संख्या 1953-54 में 112, 1954-55 में 145 और 1955-56 में 259 थी यानी यह कहा जा सकता है कि प्रथम पंचवर्षीय योजना काल में 1,57,347 ग्रामों में, जिनमें लगभग 8,88,00,000 लोग रहते थे, सामुदायिक योजना और राष्ट्रीय विस्तार सेवा के मंडल खुल चुके थे। आज तो भारत के प्रत्येक ग्राम में एक ग्राम सेवक और एक ग्राम सेविका है और कृषि, सिंचाई, पशु-पालन, सफाई, लघु उद्योग आदि का सन्देश वहां पहुंचता है। द्वितीय योजना में कृषि के क्षेत्र में भी यह प्रावधान किया गया कि खाद्यान्नों में 25 प्रतिशत की वृद्धि हो, कुल मिलाकर कृषि में 27 प्रतिशत की वृद्धि हो और सामुदायिक विकास कार्यक्रम सारे देश में फैलाया जाए।

तीसरी पंचवर्षीय योजना में यह लक्ष्य रखा गया कि 1 करोड़ 28 लाख एकड़ अतिरिक्त भूमि में सिंचाई की जाए और इतनी ही भूमि में छोटी सिंचाई योजनाएं खोली जाएं। इस योजना में कृषि और सामुदायिक विकास के क्षेत्र में 2 करोड़ 56 लाख एकड़ भूमि लाने का प्रयास किया जाए। इनके अतिरिक्त भूरक्षण, बरानी खेती, रेह युक्त जमीन के सुधार, सुधरे हुए बीजों द्वारा अतिरिक्त खेती के विशाल लक्ष्य निर्धारित किए गए। इसी योजना में यह प्रावधान भी किया गया कि नाइट्रोजन, फास्फेट, पुटास जैसे उर्वरकों का प्रयोग बढ़ाया जाए और हरी खाद, कम्पोस्ट खाद आदि के लिए भारी लक्ष्य रखे गए। कीटनाशक दवाओं द्वारा पौधों के संरक्षण का भी प्रावधान किया गया।

तीसरी पंचवर्षीय योजना के काल में सामुदायिक विकास योजना 3 लाख 70 हजार गांवों में थी और अक्तूबर, 1963 में सारे देश में व्याप्त हो गई। प्रथम दो योजनाओं में इसके ऊपर 240 करोड़ रुपये का व्यय आया। तीसरी योजना में 294 करोड़ रु० का व्यय आया। इसके अतिरिक्त पंचायतों के ऊपर 28 करोड़ रु० के व्यय किए गए। सामुदायिक विकास योजना के अन्तर्गत ही पंचायती राज की कल्पना प्रारम्भ की गई और जिला स्तर पर तथा मंडल स्तर पर योजनाएं बनाई गईं, जिनका उद्देश्य था कृषि, छोटी सिंचाई, भूसंरक्षण, ग्रामीण वनों, पशु-पालन, डेरी तथा सहकारिता का विकास करना, ग्रामोद्योगों का विकास करना, प्राथमिक शिक्षा की व्यवस्था करना, देहातों में पेय जल का प्रावधान करना और इस बात की व्यवस्था करना कि हर सड़क को पड़ोसी सड़क या रेलवे स्टेशन से मिलाने के लिए सड़क हो। उसी योजना में इस बात का भी प्रावधान किया गया था कि ग्रामीण क्षेत्रों में जो उपलब्ध जनशक्ति है उसको उचित काम देने के लिए कार्यक्रम बनाए जाएं। कृषि विस्तार के अन्तर्गत ग्रामीण उत्पादन योजनाएं बनाई गईं। इनके अतिरिक्त पशु-पालन, डेयरी तथा मछली पालन, गृह-उद्योग और कृषि-श्रमिकों के लिए अलग कार्यक्रम निर्धारित किए गए। तीसरी योजना में भी सिंचाई की उपेक्षा नहीं की गई। हुआ यह कि यदि सन

1950-51 में 2 करोड़ 20 लाख एकड़ में बड़ी और मध्यम योजनाओं से सिंचाई होती थी तो 1965-66 में यह बढ़कर 4 करोड़ 25 लाख एकड़ हो गई। छोटी सिंचाई योजनाओं से और भी अधिक सिंचाई हुई यानी 4 करोड़ 75 लाख एकड़ में और कुल मिलाकर जहां 1950-51 में 5 करोड़ 15 लाख एकड़ में सिंचाई होती थी, वहां 1965-66 में 9 करोड़ एकड़ में होने लगी। तीसरी पंचवर्षीय योजना में सिंचाई परियोजनाओं के लिए 436 करोड़ रुपये का प्रावधान किया गया। इसके साथ-साथ सहकारिता, वन, ग्रामोद्योग आदि पर जो व्यय हुआ और जो ध्यान दिया गया, उस सबसे ग्रामों का विकास हुआ।

सड़कों का जो विकास हुआ तथा जो नई रेलवे लाइनें बनीं उन्होंने ग्रामीण उपज के लिए नए बाजार खोल दिए, जिसका परिणाम यह हुआ कि किसान को उसकी जरूरत का माल सस्ता मिलने लगा और जहां जरूरत हुई वहां पर वह अपना माल भेजने लगा यानी उसे अपने माल का पैसा ज्यादा मिलने लगा। सड़कों के विकास से बसों का चलना शुरू हो गया और परिवहन की इस सुविधा ने खेती, उद्योग और रोजगार तीनों में वृद्धि की। जगह-जगह स्कूल खुले, कालेज खुले, शिक्षा का प्रसार हुआ और उस प्रसार से रोजगार में जो वृद्धि हुई उससे गांव में आने वाली आय की बढ़ोतरी हुई। यह ठीक है कि महंगाई बढ़ी है पर जिस किसी ने भी 20 वर्ष पहले के गांव देखे हैं और जो आज के गांव देखता है वह कह सकता है कि गरीबी की रेखा घटी हो या बढ़ी हो पर तब जिसे गरीबी समझा जाता था वह कुछ और थी और अब जिसे गरीबी समझा जाता है वह कुछ और है। आज औद्योगीकरण का ग्रामों पर प्रभाव पड़ा है, यद्यपि उद्योगों के विकास को ग्रामीण विकास का हिस्सा नहीं माना जाता। नेहरूजी के जमाने में मिलों से कुछ कपड़ा बनना बन्द हो गया और वह कार्य केवल हथकरघे द्वारा निर्मित वस्त्रों के लिये छोड़ दिया गया। आज हथकरघा क्षेत्र ने इतनी प्रगति की है कि उसका माल विदेशों को निर्यात होता है। बिजली आने से केवल नलकूप ही नहीं चले, लिफ्ट सिंचाई योजनाएं ही नहीं चलीं, ऐसे अनेकों पम्प-सेट लगाए गए जिन्होंने पानी में वृद्धि की। इसी तरह बिजली से गृह उद्योगों को बढ़ावा मिला, ग्रामीण जीवन की सुविधाएं बढ़ीं, ग्रामों में नल लगे और किसानों के पास यातायात के साधन के रूप में घोड़ी या बैलगाड़ी की जगह ट्रैक्टर ने ले ली तो इसे हम उस ग्राम के जीवन में उद्योगों का योगदान ही कहेंगे। हालांकि उद्योग पर लगाई गई पूंजी ग्रामीण विकास के क्षेत्र में नहीं आती परन्तु ट्रैक्टर, पानी के पम्प और उर्वरक जैसे उद्योगों का नेहरूजी के नेतृत्व में जो विकास हुआ उस सबने ग्रामीण उत्पादन में वृद्धि की और ग्रामीण जीवन को अधिक रुचिकर और अधिक वैविध्य-पूर्ण बनाया। नेहरूजी की यह कल्पना दृष्टि ही थी जिसने भारतीय ग्रामीण जीवन में नई रोशनी दी। यह ठीक है कि उन्होंने बीज डाला था, फल किसी के समय उगे। पर उनके योगदान को भुलाया नहीं जा सकता। □

प्रकाशन विभाग के लिए मुद्रक

प्रकाशन विभाग को अपने विभिन्न प्रकाशनों के लिए प्रिन्टरों की आवश्यकता है। अतः पुस्तकों, पत्रिकाओं, रंगीन तथा मोनोक्रोम हाफटोन और रेखा चित्रों की छपाई के नमूनों सहित ऐसे प्रिन्टरों से आवेदन आमंत्रित किए जाते हैं :—

(अ) वे लेटर प्रेस प्रिन्टर जिनके पास 60×90 से० मी० तथा 45.5×58 से० मी० की कम से कम दो सिलिन्डर मशीन हैं।

(ब) आफसेट प्रिन्टर जिनके पास 76×102 से० मी० और 60×90 से० मी० की दो मशीनें हैं तथा कैमरा, आर्क लैम्प, प्रिन्ट डाउन आदि उपकरणों की व्यवस्था है।

इन दोनों श्रेणियों के मुद्रकों के पास पर्याप्त कम्पोजिंग क्षमता (जहां तक हो मैकेनिकल) और अच्छी जिल्द-साजी की व्यवस्था होनी चाहिए। उन सभी प्रिन्टरों को भी जो प्रकाशन विभाग के पैनल पर है आवेदन पत्र भेजना चाहिए। अंग्रेजी और हिन्दी के अतिरिक्त अन्य भारतीय भाषाओं के जिन मुद्रकों के पास 45.5×58 से०मी० आकार की कम से कम एक सिलिन्डर मशीन है वे भी आवेदन कर सकते हैं।

कृपया आवेदन प्रपत्र के लिए निदेशक, प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नई दिल्ली 110001 को यथा शीघ्र लिखें।

ग्रामीण औद्योगीकरण क्यों जरूरी

डा० बद्री विशाल त्रिपाठी

योजनाकाल में भारतीय अर्थ-व्यवस्था ने विभिन्न उत्पादक क्षेत्रों में महत्वपूर्ण प्रगति की है, जिससे इसमें व्याप्त दीर्घकालीन गतिरोध की अवस्था समाप्त हुई। कतिपय वर्षों में उतार-चढ़ावों के बावजूद प्रति व्यक्ति और राष्ट्रीय आय में निरंतर बढ़ने की प्रवृत्ति रही है। 1970-71 की कीमतों पर भारत की प्रति व्यक्ति आय 1950-51 में 466 रु० से बढ़कर वर्ष 1976-77 में 655.2 रु० हो गई। विभिन्न संस्थागत सुधारों तथा संकर किस्म के बीजों और अन्य आधुनिक औद्योगिक कृषि निवेशों के प्रयोग से कृषि उत्पादन और उत्पादकता बढ़ी। खाद्यान्नों का उत्पादन 1950-51 के 504 लाख टन से बढ़कर 1978-79 में 1310 लाख टन हो गया। फलस्वरूप जहां खाद्यान्नों के आयात पर करोड़ों रुपया व्यय किया जाता था वहां अब 65 करोड़ जनसंख्या के लिए खाद्यान्न पूर्ति करने के साथ-साथ हम निर्यात करने की स्थिति में हो गए हैं। डर्स विलियम और पाल पैडाक ने 1966-67 में भारतीय अर्थव्यवस्था में खाद्यान्नों की कमी और उससे जन्य अकाल की स्थिति का अनुमान लगाते हुए यह विचार व्यक्त किया था कि भारतीय अर्थ-व्यवस्था की स्थिति युद्ध में घायल उस तीसरे कोटि के सिपाही की भांति है जिसे गहन उपचार के बाद भी ठीक नहीं किया जा सकता। अतः उसे मरने के लिए छोड़ दिया जाना चाहिए। उनका विचार था कि भारत की खाद्य समस्या सुलझाई ही नहीं जा सकती और इसे दुर्भिक्षों से बचाया ही नहीं जा सकता। हमारे कृषि विकास कार्यक्रमों ने पाल-पैडाक की इस अभिधारणा को असत्य सिद्ध कर दिया। यह वस्तुतः गौरव की बात है। सार्वजनिक क्षेत्र के विभिन्न उद्योगों के विकास ने देश में सामान्य औद्योगीकरण का बुनियादी ढांचा तैयार कर दिया है। योजना काल की इस तीस वर्ष की अवधि में इतने बड़े पैमाने पर औद्योगिक क्षमता, कौशल, प्रौद्योगिकी एवं वैज्ञानिकी का विकास हुआ है जिसकी कल्पना भी योजना काल के पूर्व नहीं की जा सकती थी।

ग्रामीण विकास की विसंगतियां

योजनाकाल में समग्र अर्थव्यवस्था के विकास के साथ ग्रामीण विकास की दिशा में भी कार्य हुआ। भू-धारण पद्धति में सुधारार्थ भूमि-सुधार अधिनियमों को कार्यान्वित किया गया। चकबन्दी प्रक्रिया से कृषकों की विभिन्न स्थानों पर बिखरी जोतों को एक स्थान पर लाने में मदद मिली।

जोत-सीमाबन्दी अधिनियमों द्वारा कृषि स्वामित्व में व्याप्त असमानताओं को घटाने का प्रयास किया गया। संकर किस्म की फसलों के अन्तर्गत क्षेत्र बढ़े। शुद्ध सिंचित क्षेत्र वर्ष 1950-51 में 20.9 लाख हेक्टेयर था जो वर्ष 1976-77 में बढ़कर 47.01 लाख हेक्टेयर हो गया। इस अवधि में विद्युतीकृत गांवों की संख्या 3061 से बढ़कर 222869 हो गई। उर्वरकों का प्रयोग भी इस अवधि में बहुत बढ़ा। परन्तु ग्रामीण विकास की इस निष्पादन पद्धति ने विभिन्न विसंगतियों को भी जन्म दिया है जो निम्नलिखित हैं। इससे विकास के वास्तविक लक्ष्य नहीं पूरे हो सके।

बढ़ती गरीबी

योजनाकाल में विभिन्न उत्पादक क्षेत्रों में सुधार के बावजूद आज देश की जनसंख्या का एक व्यापक जनसमूह स्वतंत्रता प्राप्ति काल की तुलना में अधिक गरीब और अभाव ग्रस्त है। गरीबी और पिछड़ेपन की यह समस्या यद्यपि नगरीय और ग्रामीण दोनों क्षेत्रों में है तथापि इसकी व्यापकता गांवों में ही अधिक है। महानगरों और औद्योगिक प्रतिष्ठानों के निकट गंदी बस्तियों में रहने वालों की जिन्दगी यद्यपि दुर्दशामय है, लेकिन फिर भी वे बहुसंख्यक ग्रामीणों की तुलना में बेहतर हैं। गांव में रहते तो शायद उन्हें मात्र रोटी भी न मिल पाती। नगरीय गरीबों का यह वर्ग ग्रामीण क्षेत्र के सबसे कमजोर व निर्बल वर्ग से काम की तलाश में नगरों की ओर आता है। कुछ आधुनिक नगरों, औद्योगिक प्रतिष्ठानों का विकास तो देश के पिछड़ेपन और गरीबी के समुद्र में छोटे द्वीपों की भांति प्रतीत होता है। ग्रामीण जनसंख्या में तो गरीबी उत्तरोत्तर बढ़ती गई है। इस परिणाम के लिए योजनाओं के कार्यान्वयन में अंतर्विरोध उत्तरदायी रहा है। भारत में प्रथम पंचवर्षीय योजना से चतुर्थ पंचवर्षीय योजना के आरम्भ तक आयोजन की कार्य पद्धति के मूल में यह संकल्पना निहित थी कि तीव्र आर्थिक प्रगति द्वारा ही गरीब जनसंख्या के आर्थिक परिवेश में स्थायी सुधार किया जा

सकता है। उत्पादन कम होने पर गरीबी रहेगी ही, वितरित होगी तो गरीबी ही। अस्तु वितरणात्मक न्याय पर जोर देना आर्थिक प्रगति में विलम्ब उत्पन्न करना है। परन्तु इस नीति के परिणाम अधिक उत्साहजनक नहीं रहे। विभिन्न विकास कार्यक्रमों के धनात्मक परिणाम समाज के गरीब व निर्धन वर्ग के लोगों को अपेक्षाकृत कम मिले हैं, जबकि सामाजिक न्याय के दृष्टिकोण से विकास कार्यक्रमों के लाभ मुख्यतः उन्हें ही मिलने चाहिए थे।

कृषि जन्य लाभों का असमान वितरण

योजनाकालीन कृषि विकास से उन लोगों को ही मुख्य रूप से लाभ मिला है जिनके पास पर्याप्त भूमि थी। नवीन कृषि निवेश अधिक पूंजी की अपेक्षा करते हैं। अतएव वे छोटे और सीमांत किसानों की क्षमता से परे हैं और जोत आकार के दृष्टिकोण से अलाभकारी भी। इस कारण नवीन कृषि निवेशों यथा ट्रैक्टर, पंपसेट, थ्रैशर, रासायनिक उर्वरक आदि के लाभ लघु और सीमान्त कृषकों को अत्यंत कम मिल सके हैं। खेतिहर मजदूरों की स्थिति तो अत्यंत खराब है। यद्यपि इन मजदूरों की मजदूरी इस अवधि में बढ़ी है लेकिन सतत बढ़ती हुई कीमतों ने इसके प्रभाव को शून्य कर दिया तथा जिस दर से खेतिहर परिवारों का भार बढ़ा है उस दर से मजदूरों की मजदूरी नहीं बढ़ी। इस प्रकार आधुनिक कृषि विकास ने अंतर्वर्गीय विषमताओं को अधिक किया है। इसके अतिरिक्त वर्तमान कृषि विकास की प्रक्रिया में क्षेत्रीय असमानताएं भी बढ़ी हैं। बहुप्रचारित हरित क्रान्ति से कुछ विशेष क्षेत्रों की कृषि में ही सुधार हुआ है। अधिकांश क्षेत्रों यथा मध्य प्रदेश, बिहार, उड़ीसा, कश्मीर आदि राज्यों में कृषि का परंपरागत ढांचा आज भी विद्यमान है। देश के विभिन्न क्षेत्रों में कृषि विकास की असमान प्रकृति का विवरण योजना आयोग के एक सर्वेक्षण ज्ञात होता है। सर्वेक्षण के अनुसार वर्ष 1976 में समाप्त होने वाले दशक में देश के 400 जिलों में से 25 प्रतिशत जिलों (100 जिलों) की संवृद्धि दर ऋणात्मक रही है। 14 प्रतिशत जिलों में संवृद्धि दर शून्य से 1 प्रतिशत के बीच रही है। लगभग 25 प्रतिशत जिलों में संवृद्धि दर लगभग 3 प्रतिशत रही है। कुछ जिलों में 7 प्रतिशत संवृद्धि दर रही जबकि 4 जिलों में तो 10 प्रतिशत प्रतिवर्ष की दर से कृषि उपज बढ़ी जिसका तात्पर्य है कि दस वर्षों में ही वहां उत्पादन दुगना हो गया। इस विश्लेषण से यह प्रतीत होता है कि देश के लगभग 40 प्रतिशत जिलों में कृषि उपज वृद्धि की दर 1 प्रतिशत से नीची रही। इससे क्षेत्रीय विषमताओं की वृद्धि स्वाभाविक ही है। विभिन्न भूमि सुधार अधिनियमों के बावजूद आज भी कृषि क्षेत्र सामंतवादी बन्धनों से जकड़ा हुआ है और भू-स्वामित्व में व्याप्त असमानताएं बढ़ रही हैं। भारतीय रिजर्व बैंक के एक अध्ययन के अनुसार वर्ष 1971 में सबसे निर्धन 10 प्रतिशत ग्रामीण परिवारों के पास कुल ग्रामीण संपत्ति, मुख्यतः भूमि का 0.1 प्रतिशत भाग था, जबकि सबसे समृद्ध 10 प्रतिशत लोगों के पास कुल संपत्ति का 50 प्रतिशत था। लगभग सभी राज्यों में जोत-सीमाबंदी कानून पारित कर दिए गए हैं लेकिन फिर भी देश के 5 प्रतिशत बड़े किसान कृषि योग्य भूमि के 29 प्रतिशत भाग पर खेती करते हैं जबकि दूसरी ओर 75 प्रतिशत किसान मात्र 31 प्रतिशत कृषि योग्य भूमि पर खेती करते हैं। जोत-सीमाबंदी कानूनों के आधार परदेश में सीमांत किसानों और भूमिहीन लोगों के वितरण के लिए 2.15 करोड़ एकड़ भूमि मिलनी चाहिए, लेकिन केवल 40.4 लाख एकड़ भूमि ही अतिरिक्त घोषित की जा सकी है जिसमें से केवल 21 लाख एकड़ भूमि ही सरकार के स्वामित्व में आ सकी है और केवल 12.9 लाख एकड़ भूमि ही वितरित की जा सकी है।

अनुपयुक्त निजी उद्योगों का विकास

उद्योगों के सम्बन्ध में आयोजन की नीति यह रही है कि आधारिक संरचना के निर्माणार्थ भारी उद्योगों को प्राथमिकता दी जाए। यद्यपि यह स्वीकार किया गया कि भारी उद्योगों यथा लोहा, सीमेंट, रासायनिक उर्वरक आदि में भारी पूंजी की जरूरत होती है, उनकी परिपक्वता अवधि भी अधिक होती है तथापि यह माना गया कि उनकी स्थापना के बिना भारत न केवल उत्पादक वस्तुओं वरन उपभोक्ता वस्तुओं का भी आयात करता रहेगा। इस कारण आधारित उद्योगों का विकास आवश्यक माना गया। इस प्रकार के उद्योगों का पूंजी प्रधान होना और उनमें केवल प्रशिक्षित श्रमिकों को रोजगार मिलना स्वाभाविक था। परन्तु विडम्बना यह है कि हमने दिन प्रतिदिन प्रयोग आने वाली उपभोक्ता वस्तुओं के उत्पादन में भी पूंजी प्रधान तकनीक पर ही जोर दिया। विभिन्न उपभोक्ता वस्तुओं का उत्पादन बड़ी मशीनों द्वारा वृहद औद्योगिक प्रतिष्ठानों में होता है। इस कारण उनमें रोजगार के अवसर अधिक नहीं हो सके। निजी क्षेत्र के उद्यमियों ने बहुधा उन्हीं वस्तुओं के उत्पादन पर जोर दिया जो सामान्य जनसमुदाय के उपभोग की न होकर वर्ग विशेष के लिए ही होती हैं। निजी उद्यमियों के कारखाने बहुधा नगरीय क्षेत्रों की ओर ही उन्मुख रहे हैं। इस कारण भी ग्रामीण समुदाय उनमें रोजगार नहीं पा सके।

बेरोजगारों की बढ़ती संख्या

योजनाकाल में जहां एक ओर समग्र उत्पादन और राष्ट्रीय आय बढ़ी है, वहीं दूसरी ओर बेरोजगारों की संख्या भी उत्तरोत्तर बढ़ती गई है। भारत सरकार द्वारा नियुक्त भगवती समिति के प्रतिवेदन के अनुसार ग्रामीण क्षेत्र में पूर्णतः बेरोजगारों की संख्या 1970 में 161 लाख थी। इसी प्रकार प्रो० ब्रह्मानन्द का विचार है कि ग्रामीण क्षेत्र में लगभग 140 लाख लोग पूर्णतः बेरोजगार हैं। यह आकलन समग्र ग्रामीण बेरोजगारी का स्पष्ट चित्र प्रस्तुत नहीं करता है। ग्रामीण क्षेत्र में मुख्यतः अर्ध-रोजगार की स्थिति है, लोगों को वर्ष के दिनों कुछ कार्य मिलता है और शेष दिनों में वे बेरोजगार रहते हैं। इस कारण उन्हें इतनी आय नहीं मिल पाती कि वे अपना सामान्य जीवन स्तर बढ़ा सकें। वास्तव में देश की वह समस्त जनसंख्या जो गरीबी की रेखा से नीचे है वह या तो बेरोजगार है या अर्धरोजगार की स्थिति में है। प्रो० राजकृष्ण ने आय कसौटी के आधार पर यह अनुमान लगाया है कि देश की लगभग 40 प्रतिशत जनसंख्या के पास सम्यक रोजगार के अवसर उपलब्ध नहीं हैं।

विकास की उपरोक्त विसंगतियां मुख्यतः ग्रामीण क्षेत्र के एक बहुसंख्यक जनसमुदाय के पिछड़ेपन, बेरोजगारी, गरीबी और साधनों की न्यूनता से सम्बद्ध हैं। इस गरीब वर्ग की समाजार्थिक स्थिति में सुधार के लिए ग्रामीण उद्योगों का व्यापक प्रसार एक प्रभावशाली उपाय हो सकता है। ग्रामीण उद्योगों से अभिप्राय मुख्यतः कुटीर उद्योगों से है। ग्रामीण उद्योगों से अभिप्राय ऐसे उद्योगों से है जो

क्षेत्रामीण त में उपलब्ध स्थानीय कच्चे पदार्थों का उपयोग करते हुए परिवारों में सामान्य पूंजी से चलाए जा सकें। यह आवश्यक नहीं कि ग्रामीण क्षेत्र में मात्र कुटीर उद्योगों का ही विकास किया जाए, इनके साथ लघु स्तरीय उद्योग भी ग्रामीण परिस्थिति में सुधारार्थ वांछित हैं।

औचित्य

भारतीय अर्थव्यवस्था में ग्रामीण औद्योगीकरण के औचित्य की जांच के लिए यह जानकारी आवश्यक है कि ग्रामीण उद्योग विभिन्न आर्थिक व सामाजिक समस्याओं के समाधान में किस सीमा तक सहायक हो सकते हैं? देश के समग्र आर्थिक विकास में उनका क्या योगदान हो सकता है? यहां इन्हीं तथ्यों की संक्षिप्त व्याख्या प्रस्तुत है जिनके आधार पर विभिन्न विकास कार्यक्रमों में ग्रामीण औद्योगीकरण को प्राथमिकता दी जानी चाहिए।

सम्पूर्ण ग्रामीण विकास केवल कृषि विकास से ही सम्भव नहीं है, कृषि उत्पादन का प्रसार मात्र समस्त ग्रामीण जनसंख्या की स्थिति सुधारने में समर्थ नहीं है। कृषि विकास के प्रत्यक्ष लाभ भूमिहीन श्रमिकों, सेवाकार्य करने वाली जातियों व अन्य गैर-खेतिहर परिवारों को नहीं मिल पाता। यदि अप्रत्यक्ष रूप से मिलता भी है तो उसका प्रभाव अत्यन्त नगण्य होता है। ग्रामीण क्षेत्र के कुल परिवारों (802 लाख) में से लगभग 220 लाख परिवार भूमिहीन हैं। उन्हें कृषि विकास से कोई महत्वपूर्ण लाभ नहीं मिला। इसी प्रकार 263 लाख ग्रामीण परिवार सीमांत और गरीब किसानों की कोटि में हैं जिनकी जोत का आकार 1 हेक्टेयर से छोटा है अस्तु वे समानांतर प्रतिभूति के अभाव में ऋण नहीं पाते। अतः पर्याप्त कृषि निविष्टियों का प्रयोग नहीं कर पाते। इस कारण उनकी जोत से उपज नहीं बढ़ पाती है। लेकिन यदि सहकारी या राजकीय अभिकरण से उन्हें कृषिगत सुविधाएं प्रदान कर दी जाएं तो भी उनकी दुर्दशा का अन्त न होगा, क्योंकि 1 हेक्टेयर या उससे छोटी जोत से उत्पादन बढ़ने के बावजूद उन्हें भरण-पोषण भर की आय न मिल सकेगी। अतः कुल ग्रामीण परिवारों के 60 26 प्रतिशत गरीब परिवारों की स्थिति में सुधार के लिए आवश्यक है कि कुटीर उद्योगों और सहायक व्यवसायों का विकास किया जाए ताकि कृषि कार्य करते हुए लोगों को अतिरिक्त आय प्राप्त हो सके।

सामाजिक न्याय की प्राप्ति के अतिरिक्त भूमि के पुनर्वितरण से ग्रामीण निर्धनता और पिछड़ेपन का समुचित समाधान नहीं हो सकेगा। अनुमान है कि भूमि की वर्तमान उत्पादकता की स्थिति में 2 हेक्टेयर से छोटी जोत न तो उस पर आश्रित लोगों का भरण-पोषण कर सकती है और न ही परिवार के सदस्यों को पूर्ण रोजगार देने में समर्थ है।

कृषि क्षेत्र में भौगोलिक क्षेत्रफल की स्थिरता कृषि उत्पादन प्रसार में एक महत्वपूर्ण अवरोधक तत्व है जबकि औद्योगिक वस्तुओं और सेवाओं के उत्पादन प्रसार के क्षेत्र में ऐसा कोई अवरोधक तत्व नहीं है। औद्योगिक उत्पादन को बदलती हुई परिस्थिति और लोगों की रुचि के सामंजस्य से निरंतर प्रगतिमान रखा जा सकता है। ग्रामीण औद्योगीकरण से ग्रामीण क्षेत्र में गैर कृषि साधनों की जो आवश्यकता हो सकती है उसकी कोई सीमा नहीं है। इसी आधार पर यह कहा जा सकता है कि गैर-कृषि कार्यों में लग सकने वाले व्यक्तियों की या रोजगार अवसरों की भी कोई सीमा नहीं हो सकती। ग्रामीण क्षेत्र में ही सुगमतापूर्वक उपलब्ध विभिन्न प्राकृतिक संसाधनों के उपयोग से जन सामान्य के लिए आवश्यक वस्तुएं उनके आस-पास ही उपलब्ध कराई जा सकती हैं।

आज देश की सर्वाधिक गम्भीर व व्यापक समस्या भीषण बेरोजगारी की है, जिसका मूल ग्रामीण क्षेत्र है। क्योंकि नगरीय बेरोजगारी ग्रामीण बेरोजगारी का आधिक्य मात्र है। इन ग्रामीण बेरोजगारों में ऐसे लोगों की संख्या बहुत अधिक है जो अल्प रोजगार या मौसमी बेरोजगारी से पीड़ित हैं। देश के आर्थिक विकास और इनके जीवन स्तर में सुधार के लिए यह आवश्यक है कि रोजगार के अवसर बढ़ाकर उनकी बेरोजगारी दूर की जाए ताकि वे समग्र राष्ट्रीय उत्पादन में भी योगदान कर सकें। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए ग्रामीण उद्योगों की संकल्पना का स्वागत किया जाना चाहिए। यद्यपि बड़े उद्योगों की अपनी विशिष्टताएं हैं, वे अर्थव्यवस्था के संरचनात्मक परिवर्तन में समर्थ हैं, सुरक्षा के संदर्भ में अपरिहार्य हैं, जनोपयोगी सेवाओं के लिए बड़े आकार के उद्योग ही सहायक सिद्ध हो सकते हैं। लेकिन बड़े आकार के उद्योगों को सामान्य ग्रामीण बेरोजगारी के समाधान के रूप में देखना मृग मरीचिका की ही भांति है। विपुल श्रम-शक्ति और सीमित पूंजी क्षमता वाली भारतीय अर्थव्यवस्था में ग्रामीण उद्योग ही रोजगार अवसरों के निर्माण में समर्थ साधन हैं। वे ग्रामीण क्षेत्र में सुगमता पूर्वक नाम मात्र की पूंजी से चलाए जा सकते हैं। कुछ वर्ष पूर्व लघु स्तरीय उद्योग विकास संगठन से सहायता प्राप्त उद्योगों में रोजगार के एक अतिरिक्त अवसर के निर्माणार्थ 40,000 रुपये की आवश्यकता थी। आज तो यह धन राशि लगभग 1 लाख रुपये तक है। दूसरी ओर ग्रामीण उद्योगों में रोजगार के एक अतिरिक्त अवसर के सृजन हेतु 4,000 से 5,000 रुपये तक की ही आवश्यकता होती है। इसके अतिरिक्त ग्रामीण छोटे उद्योगों की परिपक्वता अवधि अत्यंत कम होती है। एक वर्ष या इससे कम की अवधि में ही उत्पादन आरम्भ हो जाता है, जबकि बड़े पूंजी प्रधान उद्योगों की परिपक्वता अवधि अधिक होती है। अतः उत्पादन आरंभ होने में कई वर्ष लग जाते हैं।

किसी नियोजित अर्थव्यवस्था में निर्धन और पिछड़े वर्गों की आर्थिक स्थिति में सुधार ही सामाजिक न्याय है और सामाजिक न्याय का उद्देश्य उसी उत्पादन पद्धति में पूरा होगा जिसमें वस्तुओं और सेवाओं के उत्पादन प्रक्रिया में अधिक से अधिक लोगों को काम मिले न कि चन्द स्वचालित मशीनों और प्रशिक्षित हाथों को। आज आवश्यकता उन वस्तुओं के बड़े पैमाने पर उत्पादन की है जिनका उपयोग समाज के अधिकांश व्यक्ति करते हों और जिनके उत्पादन में बहुसंख्यक लोगों को काम मिले। इसके लिए ग्रामीण क्षेत्र के कुटीर उद्योग ही महत्वपूर्ण है, जहां बहुधा उन्हीं वस्तुओं का उत्पादन होगा जिनका प्रयोग ग्रामीण क्षेत्रों की बहुतायत जनता करती है। इस अनुकूल स्थिति के लिए जापान का दृष्टांत दिया जा सकता है जहां लगभग सभी मकान दिन में औद्योगिक उत्पादक इकाई के रूप में कार्य करते हैं और रात्रि में निवास स्थान का रूप धारण कर लेते हैं। यदि

भारत में इस प्रकार के कारखानों का जाल बिछ जाए तो बहुसंख्यक ग्रामीण लोग उत्पादक रोजगार में लगने के साथ-साथ देश के समग्र उत्पादन में योगदान कर सकेंगे और आय की असमानताएं कम होंगी।

योजनाकाल में ग्रामोद्योग

आधुनिक औद्योगिक क्रान्ति के पूर्व राष्ट्रीय अर्थ-व्यवस्था में ग्रामीण उद्योगों का महत्वपूर्ण स्थान था। भारत इन उद्योगों के लिए विश्वविख्यात था। ब्रिटिश शासन काल में सरकार की द्वेषपूर्ण नीति और ब्रिटिश कारखानों में निर्मित सामानों से प्रतियोगिता न कर सकने के कारण भारत के ग्रामीण उद्योगों का अत्यन्त तीव्र गति से पतन हुआ। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारतीय राष्ट्रीय सरकार ने ग्रामीण उद्योगों के विकास और उनके पुनरुत्थान पर जोर दिया। यह अनुभव किया गया कि केवल कृषि विकास ग्रामीण विकास के लक्ष्यों को पूरा करने में असमर्थ है। महात्मा गांधी की अर्थनीति का तो आधार ही गांव था जिसमें वे सबको ग्रामीण उद्योगों के माध्यम से उत्पादक रोजगार में लगाना चाहते थे।

विस्तारशील राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के अभिन्न अंग के रूप में ग्राम और लघु उद्योगों का विकास योजना की शुरुआत से ही पंचवर्षीय योजनाओं के प्रमुख कार्यक्रमों में से एक रहा है। यह आशा की गई कि इनसे स्थानीय संसाधनों का उपयोग हो सकेगा। वे खेती और बड़े पैमाने के उद्योगों के बीच एक महत्वपूर्ण कड़ी का काम करेंगे और इनसे रोजगार के अवसरों में वृद्धि होगी। वर्ष 1951 से 1961 के दशक में इन उद्योगों पर 218 करोड़ रु० व्यय किए गए। पहली योजना में ग्रामोद्योगों के विकास के क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण प्रयास अखिल भारतीय बोर्डों की स्थापना थी। विभिन्न ग्रामीण उद्योगों की विविध आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए केन्द्रीय सरकार ने 6 अखिल भारतीय बोर्डों—अखिल भारतीय हथकरघा बोर्ड, अखिल भारतीय दस्तकारी बोर्ड, अखिल भारतीय ग्रामोद्योग बोर्ड, लघु उद्योग बोर्ड, सिल्क बोर्ड और नारियल जटा बोर्ड की स्थापना की। इनके अतिरिक्त राज्य सरकारों ने भी अपने क्षेत्र में इस प्रकार के बोर्डों की स्थापना की। केन्द्रीय और राज्य सरकारों द्वारा स्थापित विभिन्न बोर्डों से कुछ विशिष्ट ग्रामीण उद्योगों को विकास के अवसर मिले। दूसरी योजना में देश के औद्योगीकरण के अभिन्न अंग के रूप में ग्रामीण औद्योगिक विकास कार्यक्रम आरम्भ किया गया। दूसरी पंचवर्षीय योजना में एक महत्वपूर्ण घटना खादी और ग्रामोद्योग आयोग की स्थापना थी। 1957 में स्थापित इस आयोग को खादी और ग्रामोद्योग बोर्ड से कहीं अधिक व्यापक परिपालक अधिकार दिए गए। राज्यों के उद्योग विभागों को भी संगठित करने के प्रयास किए गए। इस प्रकार एक त्रिसूत्रीय संगठन का विकास किया गया—केन्द्र में वाणिज्य और उद्योग मंत्रालय तथा अखिल भारतीय विभिन्न बोर्ड और राज्यों के उद्योग विभाग और राज्य मंडल। इसके अतिरिक्त जिला और खंड स्तर पर उद्योग अधिकारी नियुक्त किए गए। दूसरी योजना के अन्त तक 3110 विकास खंडों में से 1650 विकास खंडों में उद्योग विकास अधिकारियों की व्यवस्था कर दी गई। औद्योगिक सहकारी समितियों की संख्या जो सन 1951 में 7105 थी 1960 तक बढ़कर 29,000 हो गई। पहली योजना के विकास कार्यक्रमों की मुख्य विशेषता यह थी कि इन उद्योगों को ऋण, प्रशिक्षण सुविधाएं, तकनीकी परामर्श, आसान किस्तों पर सुधरे हुए औजारों की आपूर्ति तथा बिक्री केन्द्रों की स्थापना आदि के रूप में सहायता देने की व्यवस्था थी और दूसरी योजना में इन सभी प्रयोजनों के लिए सहायता का स्तर बढ़ा दिया गया था। तीसरी पंचवर्षीय योजना में ग्रामोद्योगों और लघु उद्योगों के विकासार्थ 264 करोड़ रु० व्यय किए गए जिसमें 114 करोड़ रु० लघु उद्योगों और औद्योगिक बस्तियों के लिए तथा 150 करोड़ रुपये ग्रामोद्योगों पर व्यय किए गए। इस वित्त व्यवस्था के अतिरिक्त सामुदायिक विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत ग्रामोद्योगों के विकास हेतु 20 करोड़ रुपये की व्यवस्था की गई। इस योजनाकाल में ग्रामीण औद्योगीकरण के संदर्भ में सघन केन्द्रों की स्थापना की गई। अप्रैल, 1962 में ग्रामीण उद्योग नियोजन समिति की स्थापना की गई। वर्ष 1962-63 में ग्रामीण उद्योग परियोजनाओं की स्थापना की गई। इस कार्यक्रम में निहित मूल संकल्पना यह थी कि ग्रामीण क्षेत्रों के स्थानीय संसाधनों और श्रम शक्ति के उपयोग की दृष्टि से कारखानों की स्थापना की जाए ताकि ग्रामीण क्षेत्र में गैर-कृषि कार्यों में रोजगार के अवसरों का विकास हो सके। 1966 से 1969 की वार्षिक योजनाओं और चतुर्थ पंचवर्षीय योजना में लघु और कुटीर उद्योगों के विकास पर क्रमशः 132.55 करोड़ रु० और 251.01 करोड़ रु० व्यय किए गए। पांचवीं पंचवर्षीय योजना की 1974 से 1978 तक की अवधि में लघु और ग्रामोद्योगों के विकास पर 387.79 करोड़ रु० व्यय किया गया जिसमें 129.59 करोड़ रु० लघु उद्योगों और औद्योगिक बस्तियों के विकास पर तथा 258.26 करोड़ रु० ग्रामोद्योगों के विकास पर व्यय किया गया। वर्ष 1978-83 की योजना में लघु उद्योगों के विकास पर 590 करोड़ और ग्रामोद्योगों के विकास पर 820 करोड़ रु० व्यय करने का प्रावधान है। 1978-83 की योजना के प्रारूप में ग्रामोद्योगों को अत्यधिक वरीयता प्रदान की गई है। समन्वित ग्रामीण विकास की रूप रेखा में यह निर्धारित कर दिया गया है कि ग्रामीण उद्योगों के अभाव में ग्रामीण विकास की कल्पना ही अवास्तविक है।

ग्रामीण क्षेत्र के औद्योगीकरण के संदर्भ में अब तक के विकास प्रयासों में केन्द्र सरकार द्वारा 1954 में स्थापित लघु स्तरीय उद्योगों के विकास संगठन और 1957 में स्थापित खादी और ग्रामोद्योग आयोग की कार्यप्रणाली सराहनीय है। इनके अतिरिक्त जिला उद्योग केन्द्रों की भूमिका भी महत्वपूर्ण सिद्ध हो रही है। लघु स्तरीय उद्योगों के विकास संगठन की औद्योगिक विस्तार सेवा के अन्तर्गत 23 सेवा संस्थान, 27 शाखा सेवा संस्थान और 48 विस्तार व प्रशिक्षण केन्द्र देश के विभिन्न भागों में लघु स्तरीय उत्पादकों को विभिन्न प्रकार की सुविधाएं प्रदान कर रहे हैं। इसके द्वारा प्रबन्ध और तकनीकी ज्ञान के लिए समय-समय पर प्रशिक्षण कार्यशाला आयोजित की जाती हैं। इस संगठन की ओर से 1977-78 में 1.35 लाख उद्यमियों को तकनीकी सहायता दी गई तथा इसकी ओर से विशेषज्ञों ने 71,000 कारखानों में जाकर मार्ग-निर्देशन दिया। यह संगठन लघु उद्योगों के विकासार्थ भिन्न-भिन्न स्थानों पर नवीन तकनीकी सेवाओं, नवीन उत्पादन विधियों, नवीन

कच्चे पदार्थों के प्रयोग का प्रदर्शन करते हैं। इसके द्वारा विभिन्न उद्योगों के सर्वेक्षण पर आधारित प्रतिवेदन लघु उद्योगों के विकास और दिशा निर्देशन में अत्यन्त सहायक होता है।

खादी और ग्रामोद्योग आयोग का मुख्य कार्य खादी और ग्रामोद्योगों की रूपरेखा तैयार करना, उनकी व्यवस्था करना और उनके विकास कार्यक्रमों को कार्यान्वित करना है। खादी और ग्रामोद्योग आयोग के कार्यक्षेत्र में खादी सहित 24 अन्य उद्योग अनुसूचित हैं जिनमें अगरबत्ती, तेल पेराई, चर्म सामग्री, गोबर गैस, मधुमक्खी पालन, सुनार व बढ़ईगीरी आदि के कार्यक्रम मुख्य हैं। यह आयोग विभिन्न ग्रामीण औद्योगिक विकास कार्यक्रमों को राज्य खादी बोर्डों, सहकारी समितियों और दस्तकारों के माध्यम से संचालित करता है। खादी ग्रामोद्योग आयोग द्वारा संचालित उद्योगों ने निरन्तर प्रगति की है।

ग्रामीण और लघु उद्योगों के विकासार्थ 1977 की औद्योगिक नीति में जिला उद्योग केन्द्रों की स्थापना की सिफारिश की गई। जिला उद्योग केन्द्र जिला स्तरीय वे संस्थान हैं जो लघु एवं ग्रामीण उद्यमकर्ताओं को एक ही स्थान पर सब प्रकार की सेवाएं और सहायता प्रदान करते हैं। इनका प्रमुख उद्देश्य बेरोजगारी समाप्त करना, ग्रामीण और नगरीय क्षेत्रों के मध्य व्याप्त असमानता घटाना, जिले के विकास के लिए औद्योगिक क्षमता का विस्तार करना, कच्चे पदार्थों, मशीनों और उपकरणों की पूर्ति करना, विपणन और अनुसंधान की सुविधाएं प्रदान करना तथा उद्यमकर्ताओं के प्रशिक्षण की व्यवस्था करना है। जिला उद्योग केन्द्र ग्रामीण उद्योगों की स्थापना के लिए विभिन्न सुविधाएं प्रसारित करने के साथ-साथ एक ओर सामुदायिक विकास खंडों और दूसरी ओर विशिष्ट विकास संस्थानों से घनिष्ठ संबंध बनाकर उन्हें निरन्तर प्रगतिशील बनाने का प्रयास करते हैं। 1953 में स्थापित 6 अखिल भारतीय बोर्ड, जो सम्बद्ध उद्योग के लिए आधारित संरचना के निर्माणार्थ कार्य करते हैं, वे अब जिला उद्योग केन्द्रों के माध्यम से कार्य करते हैं। जिला उद्योग केन्द्रों की स्थापना के साथ ही साथ ग्राम उद्योग परियोजना' (आर०आई० पी०) और ग्राम शिल्प परियोजना (आर० ए० पी०) को जिला उद्योग केन्द्रों में सम्मिलित कर दिया गया। इस प्रकार समस्त जिला उद्योग केन्द्रों में ग्रामोद्योग परियोजना और ग्राम शिल्प परियोजना के सभी घटक सम्मिलित हैं। इन दोनों परियोजनाओं के कर्मचारी भी जिला उद्योग केन्द्रों में ही सम्मिलित कर लिए गए। जनवरी, 1979 तक कुल 246 जिला उद्योग केन्द्रों की स्थापना की स्वीकृति दी जा चुकी है। यह नवीन कार्यक्रम केन्द्र द्वारा चलाया गया है, जिसका कार्यान्वियन राज्य और केन्द्र शासित सरकारों द्वारा केन्द्र सरकार के निर्देशों के आधार पर होगा। वस्तुत: जिला उद्योग केन्द्रों की अवधारणा में निहित सद्-संकलपना स्वागत योग्य है।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारतीय राष्ट्रीय सरकार के विभिन्न प्रयासों के फलस्वरूप देश की अर्थ संरचना में ग्रामीण उद्योगों का स्थान अत्यन्त ऊंचा हो गया है, विशेषकर रोजगार की दृष्टि से। नेशनल सैंपिल सर्वे के एक सर्वेक्षण अनुसार 1965 में विभिन्न उद्योगों में काम करने वालों की संख्या 165 लाख थी जिसमें से 130 लाख लघु और कुटीर उद्योगों में लगे थे। आज देश में लघु और कुटीर उद्योगों में काम करने वालों की संख्या लगभग 265 लाख है। अकेले हथकरघा उद्योग में 90 लाख श्रमिक कार्य करते हैं जो संगठित उद्योगों और खनन कार्य में लगे कुल श्रमिकों की संख्या से अधिक हैं। देश में 1975-76 में कुल औद्योगिक उत्पादन का मूल्य 37054 करोड़ रु० था जिसका 40.07 प्रतिशत भाग लघु और कुटीर उद्योगों से प्राप्त हुआ था। विभिन्न विकास प्रयासों के फलस्वरूप योजनाकाल में ग्रामीण और लघु उद्योगों में उत्पादन और रोजगार बढ़े।

निर्यात व्यापार में भी लघु और कुटीर उद्योगों का महत्व बढ़ता जा रहा है। मुख्य तथ्य यह है कि जिस प्रकार सार्वजनिक और निजी क्षेत्र के उद्योगों से गैर-परम्परागत वस्तुओं का निर्यात बढ़ रहा है, ठीक उसी प्रकार लघु और ग्रामीण उद्योगों से भी गैर-परम्परागत वस्तुओं का निर्यात बढ़ रहा है। 1976-77 में देश से कुल 5142 करोड़ रु० का सामान निर्यात किया गया जिसमें लघु और कुटीर उद्योगों से प्राप्त 878 करोड़ रु० का सामान सम्मिलित था। इस प्रकार भारत के कुल निर्यात व्यापार में लघु और कुटीर उद्योगों का योगदान 17.07 प्रतिशत है। 1976-77 में लघु और कुटीर उद्योगों से 878 करोड़ रुपये का जो सामान निर्यात किया गया, उसमें 694 करोड़ रुपये का सामान गैर-परम्परागत वस्तुओं की श्रेणी का था तथा इस निर्यात संरचना में परम्परागत वस्तुओं का अंश मात्र 184 करोड़ रु० का ही था। यह ग्रामीण और लघु उद्योगों के आधुनिक विकास और विविधतापूर्ण प्रकृति का स्पष्ट परिचायक है।

उपरोक्त विश्लेषण से यह स्पष्ट है कि योजनाकाल में ग्रामोद्योगों में महत्वपूर्ण प्रगति हुई। पूर्व स्थित ग्रामोद्योगों का विकास हुआ और कुटीर उद्योगों की सूची में नवीन वस्तुओं के उद्योग जुड़े। परन्तु अल्प-विकास और पिछड़ेपन की वर्तमान स्थिति में ये प्रयास निश्चित ही अपर्याप्त हैं। ग्रामीण क्षेत्र में कृषि, सिंचाई, विद्युतीकरण आदि कार्यक्रमों पर विनियोजित धनराशि से बहुधा भूमिवान और सम्पन्न वर्ग के लोगों को ही लाभ मिले हैं और देश की लगभग 50 प्रतिशत ग्रामीण जनसंख्या, जिसमें अनुसूचित जाति, अनुसूचित जन जाति, आदिवासी और पर्वतीय जन संख्या तथा अन्य आर्थिक दृष्टि से पिछड़े लोग हैं, अभाव का जीवन-यापन करती है। राज्य के नीति निर्देशक सिद्धान्तों की सान्त्वना के बावजूद योजनाकाल में निर्मित अतिरिक्त रोजगार के अवसरों में इन समाजार्थिक दृष्टि से निर्बल वर्ग के लोगों का उनकी निम्न शैक्षणिक योग्यता और अकुशलता के कारण समावेश नहीं हो सका। यद्यपि हाल के वर्षों में अन्त्योदय, समन्वित ग्रामीण विकास, सीमान्त कृषकों और कृषि मजदूरों की विकास संस्था और सूखोन्मुख क्षेत्रीय कार्यक्रम चलाए गए जिनका प्रभाव निश्चित ही कमजोर और पिछड़े वर्ग के लोगों पर सकारात्मक रहा है, परन्तु सीमित संसाधनों के कारण उनके प्रभाव अधिक व्यापक नहीं

[शेष पृष्ठ 32 पर]

मिश्रित अर्थव्यवस्था

के प्रणेता

नेहरूजी

दीनानाथ दुबे

आज देश में जितनी चर्चा अर्थ-व्यवस्था और उसके तरीकों पर है, शायद उतनी अन्य किसी विषय पर नहीं है। यह स्वाभाविक है क्योंकि राष्ट्र की प्रगति अर्थव्यवस्था के चतुर्दिक विकास पर निर्भर करती है। वर्तमान समय में भारतीय अर्थव्यवस्था का जो रूप है वह बहुत कुछ नेहरूजी के स्वयं के आर्थिक चिन्तन और देश की वास्तविक परिस्थितियों पर आधारित है। निस्सन्देह आजादी के बाद औद्योगिक दृष्टि से भारत जिस प्रकार दयनीय था, उसको गतिमान मिश्रित अर्थव्यवस्था के तरीकों से ही किया जा सकता था। भारत जैसे विशाल देश के लिए इसके अलावा और कोई माध्यम नहीं था। उत्पादन के अधिकतर स्रोत निजी क्षेत्र में थे। यही कारण था कि नेहरूजी ने मिश्रित अर्थ-व्यवस्था के माध्यम से देश के आर्थिक विकास का पथ प्रशस्त किया। अर्थव्यवस्था के दायरों के संबंध में नेहरूजी का क्या मत था, इसका पता भारतीय औद्योगिक महासंघ के वार्षिकोत्सव में दिए गए 4 मार्च, 1949 के भाषण से लग जाता है। उन्होंने कहा था "अब दुनिया में अनेक आर्थिक विचारधाराओं में संघर्ष हो रहा है। मुख्यत: दो धाराएं है-- एक ओर तो तथाकथित पूंजीवादी विचार धारा है और दूसरी ओर तथाकथित सोवियत रूस की साम्यवादी विचारधारा है। मैं समझता हूं कि प्रश्न को सामने रखने का यह मोटा ढंग है। यह तो सही है कि समस्या को देखने के विविध आर्थिक दृष्टिकोण हैं पर हर पक्ष अपने दृष्टिकोण की यथार्थता का कायल है, लेकिन इसमे जरूरी तौर पर यह नतीजा नहीं निकलता कि आप इन दोनों पक्षों में से एक को स्वीकार करें। बीच के कई दूसरे तरीके भी हैं। पूंजीवाद या औद्योगिक पूंजीवाद ने उत्पादन की समस्या को काफी सफलता से हल किया है। अब दूसरा प्रश्न यह उठता है कि उसने जमाने की कई समस्याओं को कहां तक हल किया है। यदि वह इन समस्याओं को हल नहीं कर सकता तो कोई और रास्ता निकालना पड़ेगा। यह सिद्धांत का नहीं कटोर तथ्य का सवाल है। समस्या के हल के लिए चरम पंथी तरीका ही नहीं वरन बीच का रास्ता भी हो सकता है।"

नेहरूजी के उक्त शब्दों में उनकी आर्थिक नीति की सम्पूर्ण झलक आ जाती है। वे जानते थे कि भारत की प्रगति न तो दकियानूसी रास्ते से है और न चरम वामपंथी मार्ग से ही होगी। उन्होंने देश की परिस्थिति के अनुकूल मध्य का मार्ग अपनाया। उनका इस संबंध में स्पष्ट विचार यह था--"भारत के आज के हालात में कुछ बुनियादी उद्योगों पर राज्य का नियंत्रण होना चाहिए। कुछ तो इसलिए कि इन मूल और बुनियादी उद्योगों का निजी हितों द्वारा नियंत्रण इन उद्योगों के अस्तित्व के लिए खतर-नाक है और कुछ दूसरे कारणों से भी। जहां तक और उद्योगों का संबंध है वे निजी नियंत्रण में रह सकते हैं। लेकिन यहां भी यह याद रखना होगा कि जब राज्य अपने औद्योगिक और अन्य प्रकार के विकास के संबंध में योजना बनाता है तो योजना भी एक हद तक राज्य की ओर से नियंत्रण का, निर्देशन का सूचकांक होता है नहीं तो योजना नहीं बन सकती है।"

नेहरूजी का आर्थिक चिन्तन कोई एक ही वर्ष में नहीं बना था। आजादी के पहले ही नेहरूजी ने देश को एक ठोस आर्थिक नीति देने की रूपरेखा तैयार कर ली थी। उनका विश्वास था कि देश को गरीबी से मुक्ति दिलाने का एकमेव उपाय योजनाबद्ध आर्थिक विकास है।

नेहरूजी ने ब्रिटेन से शिक्षा प्राप्त कर भारत लौटने पर पहली बार सन् 1920 में एक भारतीय गांव देखा। अपने तीन दिनों के गांव प्रवास का "मेरी कहानी" में लिखा गया वह वर्णन पठनीय है। उन्होंने लिखा--"उनकी मुसीबतों की ओर अपनी अपार उदासीनता देखकर मैं दुःख और शर्म के मारे गड़ गया। नंगे, भूखे, दलित, पीड़ित भारत का एक नया चित्र मेरी आंखों के सामने खड़ा होता हुआ दिखाई दिया। हम लोगों के प्रति, जो दूर से शहर से उन्हें देखने कभी-कभी आ जाते हैं, उनकी श्रद्धा देखकर मैं परेशानी में पड़ गया और उसने मुझमें एक नई जिम्मेदारी का भाव पैदा कर दिया जिसकी कल्पना से ही मेरा दिल दहल उठता है।" इस प्रकार

हम सभी भारत की चर्चा करते हैं और हम सभी भारत से बहुत बातों की आशा करते हैं। हम उसे इसके बदले में क्या देते हैं? जो कुछ हम उसे देते हैं, उससे अधिक हम उस से लेने के अधिकारी नहीं। भारत अन्त में हमें वही देगा, जो कि प्रेम और सेवा तथा रचनात्मक कार्य के रूप में हम उसे देंगे। भारत वैसा ही होगा जैसे कि हम होंगे हमारे विचार और कार्य उसे रूप प्रदान करेंगे। हम उसकी कोख से उत्पन्न बच्चे हैं, आज के भारत के छोटे छोटे अंश हैं, साथ ही हम आने वाले कल के भारत के जनक हैं। हम बड़े होंगे तो भारत बड़ा बनेगा और हम तुच्छ विचार वाले और अपने दृष्टिकोण में संकीर्ण बनेंगे, तो भारत भी वैसा ही होगा।

जवाहरलाल नेहरू

नेहरूजी की आर्थिक विचारधारा भारत की परिस्थिति समझने और ग्रामीणों के प्रत्यक्ष सम्पर्क में आने के बाद से शुरू होती है।

नेहरूजी समूचे देश का कायापलट तीव्रगति से करना चाहते थे। वे देश के उद्योगीकरण को सशक्त माध्यम मानते थे। वे देश के समान आर्थिक विकास के संबंध में परम्परागत रूढ़ियों के प्रति भी सजग थे। "डिस्कवरी आफ इण्डिया" में उन्होंने साफ लिखा है कि यदि भारत की औद्योगिक दृष्टि से तथा अन्य प्रकार की प्रगति करनी है तो चार मौलिक आवश्यकताएं हैं—भारी इंजीनियरिंग, यंत्र निर्माण उद्योग, वैज्ञानिक अनुसंधान संस्थान और विद्युत शक्ति। वे लघु और ग्राम उद्योगों का भरपूर विकास चाहते थे क्योंकि बड़े उद्योगों से ही समस्या हल नहीं हो सकती है। अखिल भारतीय चर्खा संघ के वह सक्रिय अधिकारियों में थे। बाद में जब 1951 में पंचवर्षीय योजना चालू हुई तो अखिल भारतीय खादी और ग्रामोद्योग बोर्ड (बाद में खादी और ग्रामोद्योग कमीशन) की स्थापना हुई। इसी तरह हैन्डीक्राफ्ट बोर्ड, हैन्डलूम बोर्ड, रेशम बोर्ड आदि बने। इस सब मण्डलों के गठन का मूल तात्पर्य यह था कि ग्रामीण क्षेत्र में बेरोजगारी घटे और ग्रामोद्योग का विकास हो।

इसमें सन्देह नहीं कि नेहरूजी ने आर्थिक विकास का एक मजबूत ढांचा तैयार किया। जिस देश में सूई नहीं बनती थी, वहां इस्पात, विमान और इंजीनियरिंग के भारी सामान, पेट्रो-रसायन और विमान आदि सामान बनने लगे। भारत ने अणु युग में प्रवेश किया। और उसकी गणना परमाणु तकनीक में विकसित 6 प्रमुख देशों में की जाने लगी है। पंचवर्षीय योजनाओं ने जनता में अपार उत्साह पैदा किया। लोगों के सोचने का तरीका बदला। पंचवर्षीय योजनाओं के दौरान देश भर में बने

हमने अपनी यात्रा का पहला चरण पूरा कर लिया है किन्तु हमें तुरन्त ही अपनी यात्रा के अगले चरण के लिए प्रस्थान कर देना चाहिए......जिस प्रकार जीवन का प्रवाह निरन्तर जारी रहता है उसी प्रकार योजना और विकास भी, जो किसी राष्ट्र के जीवन प्रवाह का नियमन करते हैं, एक निरन्तर प्रक्रिया है। इस प्रकार हमने जो यात्रा आरम्भ की है, उसमें कोई विराम स्थल नहीं है।

जवाहरलाल नेहरू

बांधों, बिजलीघरों, कल-कारखानों, अस्पतालों, स्कूलों, कालेजों, विश्वविद्यालयों, रेलों, सड़कों आदि के माध्यम से उन्होंने चमत्कार पैदा कर दिया। यद्यपि योजना के आलोचकों की कमी नहीं है परन्तु नेहरूजी अपने कार्यों में लगे रहे। सार्वजनिक क्षेत्र में उद्योग लगाने का एक मजबूत आधार उन्होंने तैयार किया। निजी क्षेत्र के उद्योगों ने आयोजन के दौरान चन्द वर्षों में ही जो भारी भरकम प्रगति की, वह योजना के कारण ही है।

नेहरूजी का कहना था कि "भारत का सबसे बड़ा शत्रु गरीबी है। बड़े कारखानों में, छोटे कारखानों में, खेती में चारों तरफ मिलकर काम करना है, आखिर योजनाएं बनाने के क्या माने हैं। हमारी सबसे बड़ी दुश्मन गरीबी है उस पर हर तरफ से फौजी हमला होना चाहिए। खेतों से, खलिहानों से, कारखानों से, अधिक रोजगार से, सब तरफ से हमारे यहां नया धन आएगा। रोजगार तभी मिलेगा जब काम बढ़ेगा। हमें काम बढ़ाना चाहिए।" नेहरूजी छोटे और बड़े उद्योगों के उत्पादनों को संघर्ष नहीं मानते थे। वे दोनों क्षेत्र के लिए पृथक क्षेत्र रखने के हिमायती थे। उनका विचार था कि जब हम उत्पादन की बात करते हैं चाहे वह अन्न का हो या दूसरी वस्तु का, हम सभी प्रकार के उत्पादन साधनों को प्रोत्साहन दें। उत्पादन के लिए नेहरूजी श्रम पर ज्यादा जोर देते थे।

आज समाजवाद, जनता राज, आम आदमी की भलाई जैसे शब्दों की काफी चर्चा है। नेहरूजी भी समाजवाद को ही भारत की प्रगति का अमोघ साधन मानते थे, पर उनका लक्ष्य अलग था। उनका कहना था कि यदि समाजवाद के मर्म के रूप में उत्पादन और वितरण के साधनों पर राज्य का स्वामित्व सुनिश्चित करना है तो विकल्प यह है कि मुआवजा देकर मौजूदा इकाइयां प्राप्त करली जाएं।

[शेष पृष्ठ 32 पर]

खुशहाली की राह छोटा परिवार

शरद द्विवेदी

आजादी के तेंतीस वर्षों में देश ने आर्थिक प्रगति की अनेक नई मंजिलें तय की हैं। भविष्य के लिए अनेक विशाल योजनाएं हैं। लेकिन देश में गरीबी के बोझ को उठाकर अभाव की जिंदगी जीने वालों की संख्या भी बढ़ती जा रही है। ऐसी हालत में कई बार निराशा होती है, उत्साह टूटने लगता है। आखिर ऐसी तरक्की का क्या फायदा जो देश की बहुत बड़ी आबादी को पेट भर भोजन, सिर छुपाने को जगह और तन ढकने को कपड़ा नहीं दे सके।

दूसरी तरफ इन्हीं पिछले तीस-पैंतीस वर्षों में जापान और पूर्वी यूरोप के लोगों के जीवन स्तर में सुधार की जो बातें सुनने को मिलती हैं, वे भारत के आदमी को किस्सा-कहानी जैसी लगेंगी। लेकिन इन दोनों परिस्थितियों में आबादी के पहलू की महत्वपूर्ण भूमिका रही है।

लम्बे अरसे से जापान की आबादी 13 करोड़ पर स्थिर है। पूर्वी यूरोप और कई अन्य पश्चिमी देशों में आबादी में वृद्धि की दर नगण्य हो गई है। ऐसी आशंकाएं व्यक्त की जा रही हैं कि अगर लोगों ने परिवार छोटे रखने की मौजूदा नीति जारी रखी तो इन देशों में जवान लोगों की तुलना में बूढ़े लोगों का अनुपात अधिक हो जाएगा।

अंधाधुंध वृद्धि

लेकिन लगता है, भारत के लोग आबादी बढ़ाने की किसी प्रतियोगिता में लगे हैं। परिवार नियोजन कार्यक्रम की शुरुआत, छोटे पैमाने पर ही सही, 1951 में हुई थी। उस समय देश में कुल 36 करोड़ लोग थे, जिनकी गिनती 1980 के आरम्भ में 66 करोड़ तक पहुंच गई थी। तीस वर्षों में तीस करोड़ की नई आबादी बढ़ी है। आज भी हर रोज 35 हजार नए लोग आबादी में जुड़ते जा रहे हैं। अप्रैल 1978 से जनवरी 1980 के बीच 21 महीनों में आबादी ढाई करोड़ बढ़ी है। अगर रफ्तार यही रही तो इस शताब्दी के अन्त में हम सौ करोड़ यानी एक अरब की सीमा को छू लेंगे। पहले से ही जिंदगी की कितनी कठिनाइयां हैं। बीस वर्ष बाद क्या होगा यह सोचकर घबराहट होने लगती है।

इस मसले पर अब कोई मतभेद नहीं रह गया है कि आबादी को सीमित करना होगा और जन्म दर तथा मृत्यु दर में अन्तर को घटाना होगा। आज प्रतिदिन 60 हजार बच्चों का जन्म हो रहा है जबकि प्रतिदिन 25 हजार मौतें होती हैं। इस अन्तर का एक प्रमुख कारण यह रहा है कि पिछले तीस वर्षों में देश में स्वास्थ्य सेवाओं और चिकित्सा सुविधाओं में सुधार, प्लेग, चेचक तथा हैजा जैसी महामारियों पर नियंत्रण से मृत्यु दर में काफी कमी आई है। लोगों की औसत आयु बढ़ी है जो किसी समाज की संपन्नता मापने का एक मापदंड होता है।

परिवार छोटा रखने की आवश्यकता के प्रचार और लोगों को परिवार नियोजन के उपायों की जानकारी देने की व्यवस्था के परिणामस्वरूप जन्म दर में भी कमी आई है। 1971 में प्रति हजार आबादी पर जन्म दर करीब 37 थी जो घटकर 1977 में करीब 33 हो गई। इसी अवधि में मृत्यु-दर लगभग 15 प्रति हजार रही है। आदर्श स्थिति तो यह होगी कि जन्म दर भी कम होकर 15 प्रति हजार के आसपास तक पहुंच जाए। ऐसा होने पर आबादी में बढ़ोतरी रुक जाएगी और देश की प्रगति के लाभों के बंटवारे में हर नागरिक का हिस्सा बढ़ सकेगा।

लेकिन जन्म दर को 15 प्रति हजार प्रति वर्ष करने का लक्ष्य आज दुर्लभ लगता है। हां, अगर जोरदार तरीके अपनाकर सूझ-बूझ से काम लिया जाए तो यह लक्ष्य असंभव नहीं है।

जोर-जबरदस्ती नहीं

लोकतांत्रिक प्रणाली में आस्था होने के कारण भारत में परिवार नियोजन कार्यक्रम को लागू करने में जोर-जबरदस्ती का तरीका नहीं अपनाया जा सकता। विवाह और परिवार लोगों के निजी मामले हैं, जिनमें बाहरी हस्तक्षेप को कोई भी सहन नहीं करता। किसी के निजी मामले में बल-पूर्वक कोई राय थोपने की कोशिश के प्रतिकूल प्रभाव भी हो सकते हैं और अच्छे इरादों के प्रति आशंका पैदा हो सकती है।

दो मोर्चे

परिवार नियोजन कार्यक्रम को कारगर बनाने के लिए दो मोर्चों पर अलग-अलग

ढंग से कार्रवाई करनी होगी । इस समय करीब ग्यारह करोड़ ऐसे दम्पति देश में हैं जिन्हें परिवार सीमित रखने के लिए राजी करना होगा और उन्हें आवश्यक जानकारी और सुविधाएं उपलब्ध करानी होंगी । लेकिन इनमें केवल ढाई करोड़ दम्पतियों को कारगर ढंग से सुरक्षित किया जा चुका है । प्रजनन-योग्य आयु वाले करीब तीन चौथाई दम्पतियों को हमें कम समय में परिवार को सीमित करने के उपाय अपनाने के लिए सहमत करना होगा । यह आसान काम नहीं है । यदि सरकार आवश्यक सुविधाएं जुटा भी दे, तो इतने लोगों को समझाना-बुझाना काफी बड़ा काम है । इस काम में सामाजिक और राजनीतिक दलों के कार्यकर्त्ता काफी सफल हो सकते हैं । हमारे देश में अभी भी आम लोग डाक्टरों की सलाह पर बहुत भरोसा करके उस पर पालन करते हैं । इसलिए डाक्टर भी छोटा परिवार रखने का परामर्श दे सकते हैं, जिसे स्वीकार करने में लोगों को कोई झिझक नहीं होगी ।

दूसरा अभियान नई पीढ़ी के बीच चलाना होगा जो अभी तक विवाह की मंजिल तक नहीं पहुंची है । सरकार ने विवाह योग्य आयु बढ़ा दी है, लेकिन आज भी कम आयु में विवाह काफी संख्या में हो रहे हैं । लोगों को उपयुक्त आयु में ही विवाह के लिए तैयार करना होगा । हालांकि बड़े नगरों में विवाह की आयु, शिक्षा एवं अन्य कारणों से अधिक हो गई है, लेकिन गांवों और निर्धन वर्गों में कम उम्र में ही शादियां कर दी जाती हैं । इसकी बड़ी वजह यह है कि संतान बढ़ने से निर्धन परिवारों में कमाने वालों की संख्या बढ़ती है । अज्ञानवश वे लोग यह अनुभव नहीं कर पाते कि संतान वृद्धि ही इन्हें निर्धनता के दुश्चक्र से मुक्त नहीं होने देती । यदि साधनहीन लोगों की वृद्धावस्था में देखभाल की सुविधा सरकार की ओर से बड़े पैमाने पर जुटाई जाए तो भी लोग 'बुढ़ापे में सहारे' के लिए संतान पैदा करने की लालसा छोड़ने के लिए राजी किए जा सकते हैं ।

उपलब्ध आंकड़ों से कई तथ्य सामने आए हैं । एक तो यह कि गांव की तुलना में शहरों के लोग अधिक अनुपात में परिवार नियोजन के उपाय कर रहे हैं । दूसरा यह कि शिक्षित परिवारों में संतानों की संख्या कम होने लगी है । महानगरों में तो युवा दम्पतियों में दो से अधिक संतान वाले बहुत कम मिलते हैं । इसलिए शिक्षा संस्थाओं में बच्चों को कम उम्र से ही छोटे परिवार के महत्व से अवगत करा देना चाहिए । यह शिक्षा रोचक कथा-कहानियों के माध्यम से दी जा सकती है । उपयुक्त आयु वर्ग के विद्यार्थियों को शिक्षा पाठ्यक्रम के साथ ही परिवार नियोजन के महत्व और इसके उपायों की जानकारी दी जा सकती है ।

वैसे तो परिवार कल्याण कार्यक्रम का अभियान 'एक या दो, बस' का है, लेकिन नीति बनाने वालों का दूरगामी लक्ष्य–'सुखी परिवार, एक संतान और बस' होना चाहिए । अगर साधन जुटाकर, केवल एक संतान वाले दम्पतियों को बच्चे की पढ़ाई-लिखाई और पालन-पोषण की जिम्मेदारी में सरकार मदद करने की योजना बना सके तो काफी तेजी से प्रगति हो सकती है। ऐसी किसी योजना में यह शर्त भी लगानी होगी कि दूसरी संतान होने पर पहली संतान को मिलने वाली सरकारी सहायता अथवा मुफ्त सुविधा बंद कर दी जाएगी ।

हमारी आबादी जिस भयावह तेजी से बढ़ रही है, उसे रोकने के लिए सीमित और छोटे परिवार के महत्व को देश के हर भाग में पहुंचाना होगा । शिक्षा और साधनों से वंचित लोगों को भी जागरूक करना होगा । आवश्यक प्रोत्साहन और सुविधाएं जुटानी होंगी लेकिन यह कठिन काम केवल सरकारी तंत्र के भरोसे नहीं चल सकता । इस महायज्ञ में हर उस व्यक्ति को अपना योगदान देना होगा जो इस देश की बढ़ती आबादी के बोझ से दबकर बरबाद होने के बजाय खुशहाली के रास्ते पर लाने में विश्वास रखता है । □

काफी है

अंधेरा दूर न होगा अनगिन दीप जलाने से,
प्रकाश ठहर न सकेगा कई क्षणिक ज्योतियों से ।
दे सको स्नेह निरंतर रखो बचा कर तूफानों से,
घर-आंगन के उजाले हित दो दीपक काफी हैं ।
साठ सहस की भीड़ निरर्थक है सोचो अरे !
सुरसरि लाने को बस एक भगीरथ काफी है ।
राम ने अकेले जीता बीस भुजा वाले दशानन को,
सौ दुष्टों का वध करने को एक भीम काफी है ।
कृष्ण-सुभद्रा सी हो भाई-बहन की जोड़ी,
बारह मेघों से टकराने वाला भाई गोवर्धनधारी ।
बड़ी से बड़ी कठिनाइयों में जो हिम्मत नहीं हारे,
अभिमन्यु सा सुत जनने को एक सुभद्रा काफी है ।
अनेकों तारागण के उदय से मिलता नहीं ,
एक चांद के तेज से भर जाता धरती-आकाश ।
सदा फैलाता रहे जो अपने सामर्थ्य की किरणें,
नया सबेरा लाने को इक सूरज काफी है ।
थोड़े बीज डालकर उपजाता अन्न अधिक किसान ।
अधिक बीज बोने से पौधों का होता नहीं विकास,
अच्छी देख-भाल मिले, साधन मिले अगर पर्याप्त,
जीवन उपवन महकाने को एक दो गुलाब काफी हैं ।

उर्मिला पांडेय

महिला रोजगार की समस्या और उसका समाधान

अमरनाथ राय

देश में महिलाओं की वर्तमान असंतोषजनक स्थिति को सुधारने का एक महत्वपूर्ण तरीका यह है कि उन्हें काफी मात्रा में रोजगार के अवसर सुलभ किए जाएं। इससे वे महज आर्थिक रूप से स्वावलम्बी ही नहीं होंगी, बल्कि उन्हें अपनी अन्तर्निहित शक्ति को पूर्ण रूप से विकसित करने के अवसर भी मिलेंगे जिससे अंततोगत्वा पूरा समाज लाभान्वित होगा। परन्तु अभी तक रोजगार के मामले में महिलाओं के साथ भेदभाव किया जाता रहा है। आर्थिक और सामाजिक परिवर्तनों के कारण महिलाओं के परम्परागत व्यवसाय समाप्त हो गए हैं, उत्पादन कार्यों का क्षेत्र घर और कुटिया से हटकर कल कारखानों में पहुंच गया है। चाहे अनचाहे कुछ उद्योगों में इनको भर्ती करने में भेदभाव किया जाता है। पुराने परिवारों तथा कतिपय जाति की महिलाएं पर्याप्त शिक्षा अथवा बाहर रोजगार प्राप्त नहीं कर सकतीं और इस प्रकार स्वतंत्र आमदनी का साधन नहीं जुटा सकतीं और न ही अपनी स्थिति सुधार सकती हैं।

आश्चर्य नहीं कि इन परिस्थितियों में भारत में काफी समय से श्रम शक्ति में महिलाओं की संख्या की दर निरंतर घटती जा रही है। 1901 और 1971 के बीच की अवधि में कामकाजी महिलाओं की संख्या कुल महिलाओं की जनसंख्या तथा देश के कुल कामगारों की संख्या के अनुपात में काफी घटी है।

एक अध्ययन के अनुसार गत 70 वर्षों से श्रम शक्ति में महिलाओं की संख्या दर घटती जा रही है। 1911 की जनगणना में इनकी संख्या 33.7 प्रतिशत थी, यह 1961 में घटकर 28 प्रतिशत हो गई। 1961-71 की जनगणना में महिलाओं की संख्या में 510 लाख की वृद्धि हुई वहां महिला श्रमिकों की संख्या में 260 लाख की कमी आई अर्थात 595 लाख से घटकर 336 लाख रह गई और उनकी भागीदारी की दर 28 प्रतिशत से घटकर 13.2 प्रतिशत रह गई। कामगार महिलाएं अधिकतर कृषि कार्यों पर निर्भर हैं। औद्योगिक क्षेत्र में भी उनकी संख्या गिरी ही है तथा नौकरियों में भी। ऐसा भी लगता है कि संगठित क्षेत्रों में 1972 में महिला कामगारों की संख्या काफी बढ़ी है। 1976 में महिला कामगारों की संख्या में आशातीत बढ़ोतरी हुई। अब उनकी संख्या 110 लाख से बढ़कर 860 लाख हो गई है और अनुमानत: 1983 तक इसमें 90 लाख और महिलाओं के शामिल होने की संभावना है।

लेकिन इसके साथ-साथ बेरोजगार महिलाओं की संख्या में भी बहुत वृद्धि हुई है। 31 अगस्त, 1978 तक लगभग 16 लाख महिलाएं देश के रोजगार दफ्तरों में पंजीकृत थीं। स्त्रियों में बेरोजगारी की अधिक दर के परिणामस्वरूप यह चिन्ताजनक स्थिति उत्पन्न हो गई है कि इस समय कुल बेरोजगारों में 40 प्रतिशत स्त्रियां हैं।

तब स्वाभाविक प्रश्न यह उठता है कि क्या भारत जैसे विकासशील देश के लिए ऐसी स्थिति सहनीय है जिसमें महिलाओं का एक बड़ा भाग बेरोजगार हो? हरगिज नहीं। अतएव यह आवश्यक है कि हम स्त्रियों के लिए रोजगार के अवसरों का विस्तार करें। इसके लिए ऐसे उद्योगों और व्यवसायों की वृद्धि को प्रोत्साहन देना होगा जिसमें रोजगार और अन्य बातों में स्त्रियों का सामान्यत: पर्याप्त भाग होता है और इसके लिए उनको तैयार किया जाए और उनकी विशेष कार्यक्रमों द्वारा सहायता की जाए।

महिला रोजगार को बढ़ाने के लिए सबसे पहले यह कार्रवाई करनी होगी कि महिलाओं के लिए उपलब्ध शिक्षण और प्रशिक्षण के अवसरों का विस्तार किया जाए। महिलाओं को शिक्षा और तकनीकी प्रशिक्षण के कतिपय किस्म के पाठ्यक्रमों में पर्याप्त संख्या में दाखिला देने के काम में प्राय: बाधाएं उत्पन्न होती हैं। ऐसा माना जाता है कि स्त्रियां इंजीनियरिंग जैसे पाठ्यक्रमों में दाखिला लेने की इच्छुक नहीं होंगी। महिलाओं के लिए हल्के और कम आमदनी वाले कामों की प्रशिक्षण की योजनाएं बनाई जाती हैं जैसे वस्त्र सीना,

खिलौने बनाना, हल्की हस्तकला आदि। हमें इन बाधाओं को दूर करना होगा। श्रम बाजार में महिलाओं की बढ़ती संख्या को देखते हुए विभिन्न शैक्षणिक और तकनीकी प्रशिक्षण कार्यक्रमों में महिला छात्राओं को दाखिला देने के लिए विशेष प्रयत्न किए जाने चाहिए। महिला रोजगार को बढ़ाने के लिए दूसरा महत्वपूर्ण कदम यह होना चाहिए कि जिन उद्योगों और धन्धों में महिलाओं को वरीयता दी जाती है उन सबमें सरकारी निवेश कार्यक्रमों को विशेष रूप से आगे बढ़ाया जाए। इन क्षेत्रों में अधिक उत्पादन होने से स्वतः महिलाओं के रोजगार की दर में वृद्धि होगी। संगठित क्षेत्र के कुछ महिला वरीयता वाले धन्धों, जैसे कार्यालय के सभी प्रकार के कार्य, वस्त्र कार्य, रसायन, विद्युत तथा इलेक्ट्रानिक्स उपकरणों के उद्योगों में महिलाओं को प्राथमिकता दी जाए। महिलाओं को विशेषकर विधवा तथा परित्यक्ता महिलाओं को नौकरी में आने की अधिकतम आय सीमा में आवश्यक छूट दी जानी चाहिए। नियोजकों को अपनी संस्थाओं में महिलाओं को पर्याप्त संख्या में भरती करने के लिए आवश्यक हो तो कानूनी तौर से भी बाध्य किया जाना चाहिए। कामगार महिलाओं की प्रसूति सुविधा तथा उनके बच्चों की देखभाल की सुविधा के लिए नियोजकों से निश्चित राशि वसूल कर एक निधि की स्थापना की जानी चाहिए। नियोजकों को चाहिए कि वे जो कर्मचारी शराबखोरी करते हैं, जुआ खेलते या सट्टा लगाते हैं उनके वेतन का आधा हिस्सा सीधे उनकी पत्नियों को देने की व्यवस्था करें। ग्रामीण और कृषि उद्योग में लगी महिला कामगारों के हितों की रक्षा के लिए यथेष्ट कदम उठाए जाने चाहिए। इनमें से अधिकांश हरिजन, आदिवासी और पिछड़ी जातियों की होती हैं। भूमिपतियों द्वारा इनका शोषण न किया जाए। इसके लिए हर संभव प्रयत्न किया जाना चाहिए। इसके लिए आवश्यक कानून बनाने में देर नहीं होनी चाहिए। ग्रामीण महिलाओं को व्यावसायिक प्रशिक्षण देने के लिए केन्द्र सरकार शीघ्र ही एक विशेष कार्यक्रम शुरू करेगी। उनकी प्रशिक्षण आवश्यकता का श्रम मंत्रालय द्वारा सर्वेक्षण किया जा रहा है।

भारतीय समाज विज्ञान अनुसंधान परिषद द्वारा महिला रोजगार पर प्रायोजित हाल के एक अध्ययन से पता चला है कि रात्रि पारी में महिलाओं के काम करने पर पाबंदी की वजह से उन उद्योगों में महिला कामगारों की संख्या में भारी कमी आई है जिनमें तीन पारी काम होते हैं। केन्द्रीय श्रम मंत्रालय ने अभी हाल ही में विभिन्न उद्योगों के प्रतिनिधियों से महिला रोजगार विषय पर विचार-विमर्श किया है। वस्त्र, खाद्य, संसाधन, इलेक्ट्रानिक्स, औषध और रसायन उद्योग के नियोजकों की यह आम राय थी कि महिलाओं के लिए रात्रि पारी की निषिद्धि महिला रोजगार के मार्ग में जबरदस्त अवरोधक है। शायद यही वजह है कि अमेरिका, जापान और ब्रिटेन जैसे अति उद्योगीकृत देशों ने अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन के उस समझौते को अपनाना अस्वीकार किया है जिसके अन्तर्गत रात्रि पारी में महिला कामगारों को नियोजित करने की मनाही है। भारत ने इस समझौते की 1950 में आम पुष्टि कर दी है।

प्राप्त अनुभव के प्रकाश में अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन को स्थिति पर पुनर्विचार करने के लिए कहा जाना चाहिए। रात्रि पारी प्रायः 10 बजे रात में शुरू होकर 6 बजे सुबह समाप्त होती है। कार्य-स्थल निरापद होते हुए भी महिलाओं को आने-जाने में काफी कठिनाई होती है। अतः यदि उनके आवागमन की पर्याप्त सुविधा प्रदान की जाए तो उन्हें रात्रि पारी में काम करने में कोई हिचकिचाहट नहीं होगी।

रोजगार के सीमित अवसरों को देखते हुए स्वरोजगार के लिए महिलाओं को प्रोत्साहित किया जाना अत्यावश्यक है। उपभोज्य वस्तुओं की बिक्री, बीमा एजेंट का काम, स्वतंत्र पत्रकारिता, अनुवाद, पर्यटक गाइड, सिलाई-कटाई, कपड़े की छपाई आदि कार्य महिलाओं के सर्वथा उपयुक्त हैं। महिलाओं में स्वरोजगार और लघु रोजगार को बढ़ाने के लिए आवश्यक है कि सहकारी तथा वाणिज्य बैंक कर्ज और अन्य सहायता जैसे प्रशिक्षण, तकनीकी सहायता, विपणन सुविधाएं, मशीनों की खरीद-फरोख्त औद्योगिक शेड आवंटन आदि के विनिधान में महिला कामगारों को अधिक संख्या में नियोजित करने वाली महिला उद्यमियों और महिला सहकारी संस्थाओं को वरीयता प्राप्त हो। पुनः, ग्रामीण क्षेत्रों में काम करने वाली महिला संस्थाओं, जैसे महिला मंडल आदि को बढ़ावा दिया जाए ताकि वे महिलाओं को रोजगार देने वाले कार्यक्रमों को दक्षतापूर्वक कार्यान्वित कर सकें। आन्ध्र प्रदेश महिला सहकारी वित्त निगम तथा महाराष्ट्र महिला आर्थिक विकास महामंडल जैसी प्रभावकारी संस्थाओं की स्थापना सभी राज्यों में होनी चाहिए। महिला उद्यमियों की समस्या के निराकरण के लिए श्रम और उद्योग मंत्रालय में विशेष महिला एकांश होने चाहिए। कम पढ़ी-लिखी महिलाओं के लिए अल्पावधि प्रशिक्षण की विशेष सुविधाओं की व्यवस्था अपरिहार्य है। औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थान के प्रशिक्षण कार्यक्रम विभिन्न कोटि की महिलाओं की आवश्यकता के अनुरूप लचीले होने चाहिए। महिला रोजगार पर कुछ समय पूर्व गठित कार्य-दल ने सुझाव दिया था कि उद्योग मंत्रालय के अन्तर्गत एक केन्द्रीय संगठन स्थापित किया जाना चाहिए जो महिलाओं के स्वरोजगार की नीतियां और कार्यक्रम तैयार करे। इस कार्यदल ने भी महिला विकास निगम की स्थापना पर जोर दिया है।

इस प्रकार सरकार, औद्योगिक, वाणिज्यिक, वित्तीय संस्थाएं, तथा स्वयंसेवी संस्थाएं यदि महिला रोजगार के क्षेत्र में संगठित ढंग से काम करें तो कोई कारण नहीं कि देश में महिला कामगारों की संख्या अपेक्षित रूप से नहीं बढ़े तथा परिवार, समाज और राष्ट्र-निर्माण में महिलाएं अपना अपेक्षित योगदान न दे सकें। □

ग्रामीण महिलाओं की समस्याएं

—विमला उपाध्याय—

भारत गांवों का देश है। राष्ट्रपिता गांधीजी ने ठीक ही कहा था कि देश का विकास चाहते हो, तो गांवों की ओर लौट चलो क्योंकि भारत की आत्मा उसके गांवों में वास करती है। अतएव ग्राम-विकास की विभिन्न योजनाओं को क्रियान्वित करने के साथ-साथ ग्रामीण महिलाओं की समस्याओं पर विचार-विमर्श होना चाहिए। कारण, वे ग्राम विकास की धुरी हैं, उनकी उपेक्षा से समस्या का वास्तविक हल नहीं खोजा जा सकता है। समय ने करवट बदली है। युग-युग से उपेक्षित पीड़ित ग्रामीण महिलाओं को अपने बारे में सोचने-विचारने और अपने विकास के लिए कुछ करने का पर्याप्त अवसर मिला है। आज इस बात की जरूरत है कि वे अपनी समस्याओं को खूब बारीकी से जानें और उनके हल के लिए भरपूर कोशिश करें। व्यवस्था और समाज का सक्रिय सहयोग उन्हें प्राप्त है।

ग्रामीण महिलाओं की समस्याएं द्रौपदी के चीर की तरह बढ़ती जाती हैं। यहां कुछ खास मुद्दों पर विचार करना वांछनीय है।

निरक्षरता

ग्रामीण महिलाओं में साक्षरता 3 प्रतिशत के लगभग है। निरक्षरता टांग तोड़कर बैठ गई है। फलतः अज्ञान के कारण न बच्चों की उचित देखभाल हो सकती है और न पारिवारिक विकास पर ही ध्यान दिया जा सकता है। गांवों में कहा जाता है कि पढ़ाई-लिखाई से औरतें बिगड़ जाती हैं, उनका संस्कार चौपट हो जाता है। उनके लिए तो शास्त्रों में व्यवस्था है कि एक बार पिता के घर से पति के घर डोली पर जाएं और दूसरी बार अर्थी पर श्मशान जाएं—बीच में बाहर निकलना सख्त मना है। इन दकियानूसी और संकीर्ण विचारों के सामने नारी जागरण, उसकी शिक्षा-दीक्षा पर जोर देना बड़ी सामाजिक क्रांति को जन्म देना है। लड़कियों की शिक्षा की बहुत हद तक व्यवस्था है, पर महिलाओं की शिक्षा की कोई व्यवस्था नहीं है। वयस्क शिक्षा में पुरुषों को ही भाग लेना पड़ता है।

रूढ़िवादिता

जीवन में पग-पग पर रूढ़ियों और अंधविश्वासों के कारण उन्हें कठिनाई होती है, पर जन्म घूंटी के समान उन्हें पिला दिया गया है कि इन पर विश्वास करना ही चाहिए। दाप के दरवाजे पर हाथी पलता था, तो हम सीकड़ लिए क्यों न फिरें? इसी में पुश्तैनी इज्जत बचती है। कभी किसी यज्ञ में काली बिल्ली ने मन भर दूध में मुंह डुबो दिया—सारा दूध चौपट हो गया। फलतः बिल्ली को बांधकर रखा गया। अब प्रत्येक वर्ष यज्ञ में कहीं से पकड़कर काली बिल्ली बांधी जाती है। रूढ़ि चल निकली, तो पुश्त-दर-पुश्त चलती रहेगी। पुरुष इसे तोड़ना चाहें तो महिलाएं इसके विरोध में सामने आ जाएंगी। बच्चा बीमार हुआ कि डायन, जोगिन, भूत-प्रेत का प्रकोप बताया गया। महिलाओं में उन्माद (हिस्टीरिया) को आज तक भूत-प्रेत का प्रभाव बताया जाता है। नतीजा होता है कि उसकी उचित चिकित्सा नहीं हो पाती है—लेने के देने पड़ जाते हैं। एक प्रसिद्ध समाजशास्त्री का कहना है कि शिक्षित महिलाओं में भी रूढ़ियों और अंधविश्वासों के प्रति आस्था है जिनको दूर भगाना सभी समाजशास्त्रियों और समाज सेवकों का काम है। एकबारगी उनका मानसिक प्रक्षालन नहीं हो सकता है। सच पूछिए तो पिछड़े और अर्द्ध-विकसित देश की ये सब विशेषताएं हैं, जिनमें उसका पिछड़ापन बरकरार रहे।

गिरता स्वास्थ्य और कुपोषण

ग्रामीण स्वच्छ वातावरण में रहकर भी उनका स्वास्थ्य अच्छा नहीं रहता है। आयुर्विज्ञान विभाग के हाल के सर्वेक्षण से पता चला है कि लगभग 80 प्रतिशत महिलाएं किसी न किसी रोग से ग्रस्त हैं जिनमें अधिकांश प्रसव के बाद रोग ग्रस्त हुई हैं और कुछ मासिकधर्म की गड़बड़ी और कुपोषण के कारण रुग्ण हैं। परंतु दुःख की बात यह है कि इस ओर से वे उदासीन हैं। कारण है अज्ञानता, गरीबी और निकटस्थ मातृसदन, अस्पताल की जानकारी का अभाव, यातायात के साधनों की अनुपलब्धता। विश्व स्वास्थ्य संगठन की एक रिपोर्ट से पता चला है कि प्रति वर्ष 75—80 हजार महिलाएं (गर्भवती) हल्की चोट और असावधानी के कारण मृत्यु का शिकार होती हैं। गरीबी के कारण कुपोषण सारे रोगों की जड़ है। उनका खाना-पीना भी इतना पारंपरिक है कि लाख समझाने पर भी उनमें सुधार नहीं हो पाता। आपको जानकर आश्चर्य होगा कि इसी देश में ऐसे अनेक गांव हैं जिनकी महिलाएं दाल, हरी सब्जी, फल का नाम तक नहीं जानतीं हैं, उपयोग

की बात तो दूर की है। कुपोषण के कारण उन्हें ऐसे रोग हो जाते हैं, जिनसे छुटकारा कठिन है।

खाली समय का दुरुपयोग

ग्रामीण महिलाओं को खाना बनाने, चावल कूटने, दाल दलने के अलावा कम ही काम रहता है। उनका अधिकांश समय बैठे-ठाले में बीतता है। फलतः निंदा-पुराण चलता है—कटुता वैमनस्य जन्म लेता है। आपसी संबंध बिगड़ते हैं पर सच पूछिए तो निंदा रस में रसना को जितना रस मिलता है कवियों को उतना नव रस में भी नहीं मिलता है। बच्चे बिलबिला रहे हैं, कुर्ते के बटन टूट गए हैं, बाल बेतरतीब हैं, बिना मुंह धोए खा रहे हैं, पर माताओं को गपशप से फुर्सत नहीं है चाहे घी का घड़ा क्यों न उलट जाए। वे एक तो अपने व्यस्त समय का उपयोग ठिकाने से नहीं करती हैं, दूसरी ओर खाली समय का खुलकर दुरुपयोग करती हैं।

ग्रामीण गृहिणी को परिवार कल्याण के बारे जानकारी देते हुए परिवार नियोजन सहायिका

बचत योजनाओं की अनभिज्ञता

ग्रामीण जीवन में कहावत प्रचलित है—'लूट लाओ, कूट खाओ, मोढ़ा (जलने वाली लकड़ी) से करो इंजोर (प्रकाश) अर्थात कोई सुनिश्चित व्यवस्था करने की जरूरत नहीं है। आज कमाया खा लिया—कल की चिंता नहीं। न वर्तमान के प्रति जागरूकता और न भविष्य के प्रति भय। फल होता है कि दुर्दिन आने पर, किसी आकस्मिक खर्चे का सवाल उठने पर उनके पास कुछ नहीं रहता। देश में चल रही विभिन्न बचत योजनाओं की न उन्हें जानकारी है और न समझाने पर कुछ बचत करने की ओर ध्यान ही है।

समस्याएं कैसे हल हों

सर्वप्रथम समाधान शिक्षा का प्रचार-प्रसार है। शिक्षा से उनके मन-मस्तिष्क पर पड़े प्राचीन संस्कार बह जाएंगे। उनमें नई रोशनी आएगी, नया तेज दमकेगा। इसके लिए वयस्क महिला शिक्षा की गांव-गांव में व्यवस्था हो—सबके मन में यह भाव कूट-कूट कर भर दिया जाए कि जीवन के लिए सांस लेना जितना जरूरी है, शिक्षा प्राप्त करना उससे कम जरूरी नहीं है। समाज-सेवक, समाज-सुधारक एवं सरकारी व्यवस्था इसमें खुलकर सहयोग दें। फिल्मों, नाटकों, एकांकियों, कथा-कहानियों से उनमें शिक्षा के प्रति रुचि पैदा की जाए। किताब-कलम आदि की निःशुल्क व्यवस्था की जाए। उन्हें सब प्रकार से प्रोत्साहित किया जाए। शिक्षा जीवन का मूल आधार है। इससे उनकी बहुत सी समस्याएं हल हो जाएंगी।

वे निकटस्थ मातृसदन में नियमित रूप से अपनी जांच करा लें—परिवार नियोजन केन्द्र से आवश्यक उपकरण, जेली, दवाइयां, डायफ्राम और निर्देशन ले लें। इसके लिए किसी प्रकार के संकोच की आवश्यकता नहीं है। समय-समय पर सरकार की ओर से लगाए जाने वाले स्वास्थ्य शिविरों, परिवार नियोजन शिविरों, रक्त-दान शिविरों में भाग लें। अपने को सतत जागरूक बनाएं और स्वास्थ्य पर पूरा ध्यान दें।

रूढ़ियां और अंधविश्वास अज्ञानी मस्तिष्क की उपज हैं। ये बाधाएं खड़ी करते हैं, विकास के अवसर नहीं देते हैं। इनसे अलग रहें—तर्क से काम लें। शरीर यंत्र के बिगड़ने से मनुष्य बीमार होता है—डायन के बाण चलाने पर नहीं, भूत-प्रेत के प्रकोप से भी नहीं। अतएव, ओझा-गुणी पर खर्च करने की अपेक्षा उसे अस्पताल में दिखाएं। एक ओर तो अन्तर्राष्ट्रीय महिला वर्ष मनाया जाता है, नारी मुक्ति आंदोलन जोर पकड़ता जा रहा है, दूसरी ओर महिलाएं रूढ़ियों और अंध-विश्वासों में जकड़ी रहें, तो कितना हास्यास्पद लगता है। प्राचीन आस्थाओं को झटका देकर तोड़ें और मुक्त वातावरण में सांस लें।

खाली समय का सदुपयोग करें। इस समय चटाई बुनना, डलिया बुनना, स्वेटर बनाना, सिलाई, कसीदाकारी, बुनाई, छोटे-छोटे कागज या कपड़े के खिलौने बनाना आदि ऐसे काम किए जा सकते हैं। कुपोषण से बचने और संतुलित भोजन पाने के लिए घर के आंगन में हरी तरकारियां उगाई जा सकती हैं। श्रम को प्रतिष्ठा मिलेगी, स्वास्थ्य ठीक रहेगा, मन सृजनशील कामों में लगा रहेगा, बदले में कुपोषण से मुक्ति मिलेगी, संतुलित आहार की दिशा में कदम बढ़ेगा।

[शेष पृष्ठ 30 पर]

मध्यप्रदेश में सहकारी कृषि साख

सरदार सिंह पवार

विकासशील अर्थव्यवस्था की अनेक समस्याए रहती हैं, जिन्हें सुविचारित और नियोजित प्रयासों के आधार पर ही हल किया जा सकता है। इतना ही नहीं इस दिशा में दूसरी बड़ी कठिनाई यह है कि आर्थिक विकास को संतुलित रख कर किस प्रकार देश के आधारभूत उद्योग को लगातार गति प्रदान की जाती रहे। इन विषम परिस्थितियों में नितांत आवश्यकता इस बात की है कि कृषि साख की विभिन्न प्रणालियों––अल्पकालीन, मध्यकालीन तथा दीर्घकालीन–में किस प्रकार तालमेल बिठा कर उनसे वांछित परिणाम प्राप्त किए जाएं।

भारतीय अर्थव्यवस्था मूलत: कृषि पर आधारित है। मध्यप्रदेश भी इसका अपवाद नहीं है। विशाल मध्य प्रदेश के गठन के उपरांत पूरे प्रदेश की अर्थ-व्यवस्था के संतुलित और सर्वांगीण विकास का पुनीत अभियान आरम्भ हुआ। सहकारिता को प्रदेश की अर्थ-व्यवस्था के विकासार्थ सक्षम माध्यम मानकर व्यवस्थित योजनाओं का निर्धारण और क्रियान्वयन प्रारम्भ किया गया। प्रदेश की कृषि अर्थ-व्यवस्था के विकास में सहकारी साख संस्थाओं के योगदान को स्वीकार कर तदनुसार पहल की गई।

प्रारंभिक प्रयास

पुराने मध्य प्रदेश में सन 1935 की आर्थिक मंदीकाल में सहकारी भूमि विकास बकों का आविर्भाव हुआ, जिनका मूल उद्देश्य मंदी जनित प्रतिकूल प्रभावों से छुटकारा तथा दीर्घकालीन साख की आपूर्ति करना था। वर्तमान मध्य प्रदेश का 1 नवम्बर, 1956 को गठन हुआ। पुनर्गठित मध्यप्रदेश के पूर्व के क्षेत्रों में नरसिंहपुर, जबलपुर, रायपुर तथा खंडवा में दीर्घकालीन साख की व्यवस्था जिला स्तरीय बैंक कर रहे थे। इसके अतिरिक्त इन क्षेत्रों के अन्य जिलों में दीर्घकालीन कृषि साख केन्द्रीय सहकारी बेंकों द्वारा प्रदान की जाती थी। राज्य स्तरीय सहकारी बैंक में एक पृथक विभाग दीर्घकालीन साख व्यवस्था हेतु कार्यरत था।

वर्तमान स्थिति

वर्तमान मध्यप्रदेश के गठन के पश्चात प्रमुख समस्या पूरे प्रदेश के लिए दीर्घकालीन कृषि साख की व्यवस्था और उसका संचालन करने की थी। इस अहम समस्या के निराकरण के लिए राज्य स्तर पर 21 मार्च, 1961 को जबलपुर में मध्य प्रदेश राज्य सहकारी भूमि बंधक बैंक की स्थापना हुई। इस बैंक ने अगस्त, 1961 से कार्य आरंभ किया।

मध्य प्रदेश में भूमि विकास बैंकों का स्वरूप संघात्मक है। जिला स्तर पर 45 जिला सहकारी भूमि विकास बैंक कार्यरत हैं। राज्य स्तर पर एक राज्य सहकारी भूमि विकास बैंक और संभाग स्तर पर उनके 10 क्षेत्रीय कार्यालय कार्यरत हैं। 45 जिलों में स्वतंत्र जिला सहकारी भूमि विकास बैंक अपनी तहसील तथा ब्लाक स्तर पर 252 शाखाओं सहित कार्यरत हैं। ये सभी कृषक जगत की दीर्घकालीन ऋण आवश्यकता की पूर्ति कार्य में संलग्न हैं। प्रदेश का शीर्षस्थ बैंक प्राथमिक बैंकों को वित्त उपलब्ध कराने के अतिरिक्त उनका वित्तीय मार्गदर्शन, नीति निर्देशन, निरीक्षण तथा पर्यवेक्षण भी समय-समय पर करता है।

प्रदेश के भूमि विकास बैंकों द्वारा कृषकों को सामान्यतया 7 से 11 वर्ष की अवधि के लिए ऋण 11 प्रतिशत ब्याज दर पर दिए जाते हैं। पम्पसेट, ट्रैक्टर आदि के लिए 7 वर्ष की अवधि का तथा कूप निर्माण और नलकूप आदि के लिए 10 वर्ष की अवधि के ऋण दिए जाते हैं। प्रदेश के लघु कृषकों को 12 से 15 वर्ष की अवधि के लिए ऋण दिए जाते हैं। सामान्यतया निम्नांकित प्रयोजनों हेतु इन बैंकों द्वारा ऋण प्रदान किए जाते हैं। कुआं निर्माण, नलकूप निर्माण, कुआं सुधार, विद्युत और डीजल चालित पम्पसेट, ट्रैक्टर, थ्रेशर और अन्य कृषि यंत्र खरीदना, सिंचाई हेतु स्प्रिंकलर, पाइप लाइन अथवा नाली निर्माण, फलोद्यान लगाना, भूमि समतलीकरण और भू-संरक्षण, बांध बनाना तथा ऐसे अन्य सुधार, गन्ना पेरने, गुड़ या खांडसारी या शक्कर बनाने के यंत्र खरीदना आदि।

प्रदेश के राज्य सहकारी भूमि विकास बैंक द्वारा अपनी स्थापना से लेकर अब तक करीब 1 करोड़ रुपये का दीर्घकालीन ऋण वितरित किया गया।

कृषि पुर्नवित्त एवं विकास निगम

इसके अतिरिक्त कृषि पुर्नवित्त एवं विकास निगम की योजनाओं के अंतर्गत भी दीर्घकालीन साख की व्यवस्था की जाती है। इन योजनाओं में 80 प्रतिशत से 90 प्रतिशत राशि कृषि तथा पुर्नवित्त निगम तथा शेष 10 प्रतिशत से 20 प्रतिशत की राशि शासन द्वारा उपलब्ध करवाई जाती है। मध्यप्रदेश में कृषि पुर्नवित्त एवं विकास निगम की सहायता से विशेष विकास योजनाएं क्रियान्वित की जा रही हैं। 1975-76 तक निगम द्वारा कूप-निर्माण, पम्पसेट, भूमि संरक्षण, ट्रैक्टर आदि की

योजनाएं स्वीकृत थीं । इनके अन्तर्गत 27 करोड़ रुपये के ऋण देने का लक्ष्य था ।

विश्व बैंक कृषि साख योजना

विश्व बैंक कृषि साख परियोजना के अन्तर्गत प्रदेश में लघु सिंचाई सुविधाओं के विकासार्थ 1973 से 45.22 करोड़ रुपये की स्वीकृति कृषि पुनर्वित्त एवं विकास निगम के माध्यम से की गई । इस परियोजना के अन्तर्गत लघु सिंचाई कार्यों हेतु 2500 नए कुओं का निर्माण, 15,000 कुओं का सुधार, 27,800 विद्युत पम्प, 12,500 डीजल पम्प, 2700 रहट, पाइप लाइन एवं भूमि विकास हेतु लगभग 4300 कृषकों को दीर्घकालीन साख दी जानी थी । यह योजना प्रदेश के 34 जिलों में सहकारी भूमि विकास बैंकों तथा राष्ट्रीयकृत बैंकों द्वारा क्रियान्वित की गई । योजना के लक्षित उद्देश्यों की पूर्ति निश्चित समयावधि से पूर्व ही कर ली गई ।

प्रदेश में निगम की विभिन्न साख योजनाओं के अन्तर्गत 243.30 लाख रुपयों की 11 योजनाओं का क्रियान्वयन हाल ही में प्रारम्भ हुआ है । इसके अन्तर्गत मार्च 77 तक 10.41 लाख रुपये का ऋण वितरित किया जा चुका है ।

ऋण वसूली

ऋण वसूली पर ही दीर्घकालीन साख आपूर्ति का बहुत बड़ा भाग निर्भर करता है । कृषकों को जिला सहकारी भूमि विकास बैंक द्वारा दिए जाने वाले ऋण की पूर्ति और भावी ऋण राशि के लिए राज्य भूमि विकास बैंक द्वारा व्यवस्था की जाती है । ऋण वितरण के कार्यक्रम का क्रियान्वयन रिजर्व बैंक आफ इन्डिया के निर्देशानुसार किया जाता है । यह आवश्यक है कि ऋण मांग की 75 प्रतिशत वसूली की जाए । राज्य स्तर पर शीर्षस्थ भूमि विकास बैंक की वसूली स्थिति 75 प्रतिशत यानी संतोषजनक है ।

एक अभिनव प्रयोग

प्रदेश का शीर्षस्थ बैंक मध्यप्रदेश विद्युत मंडल को भूमि विकास बैंकों के ऋण से स्थापित 5 हार्स पावर के विद्युत पम्पों के विद्युतीकरण हेतु 4500 रुपये प्रति पम्प के मान से ऋण प्रदान करता है ताकि पम्पों का विद्युतीकरण किया जा सके । इसके अन्तर्गत अभी तक 508 लाख रुपये के ऋण मध्य प्रदेश विद्युत मंडल को दिए जा चुके हैं । इस ऋण योजना के कारण सिंचाई सुविधाओं में वृद्धि हो रही है ।

शीर्षस्थ बैंक ने विभिन्न प्रयासों से अपनी नीति और प्रक्रिया में इस प्रकार सुधार किए हैं कि जिससे जिला बैंक अपने स्तर पर ही ट्रैक्टर तथा ट्यूबवैल के ऋणों को छोड़कर अन्य ऋण स्वीकृत कर किसानों को भुगतान कर सकता है । यह व्यवस्था भी की गई है कि कृषक को 35 दिन के अन्दर ऋण स्वीकृत कर वितरित कर दिया जाए ।

अतएव यह कहा जा सकता है कि ग्रामीण जीवन के विकास तथा छोटे कृषक समाज के उत्थान का सबसे उपयोगी माध्यम दीर्घकालीन सहकारी साख है । ग्रामीण जीवन के विकास हेतु साख की इस व्यवस्था के अतिरिक्त कोई दूसरा विकल्प नजर नहीं आता है । वैसे तो प्रदेश में दीर्घकालीन सहकारी साख हेतु किए जा रहे प्रयास संतोषजनक हैं । फिर भी इस दिशा में निम्न सुझाव और भी उपयोगी हो सकते हैं :—

- भूमि विकास बैंकों की कार्यप्रणाली का गहराई से अध्ययन करने पर यह महसूस होता है कि इनमें निहित स्वार्थों का प्रभाव बढ़ता जा रहा है । फलतः अपेक्षित विकास नहीं हो पा रहा है और कृषक समाज को पूरा-पूरा लाभ प्राप्त नहीं हो रहा है । आवश्यकता अब यह है कि इस बढ़ते प्रभाव को कम किया जाए । इस दिशा में यदि सहकारी संस्थाओं के निर्वाचन में एकरूपता लाई जाए तो उत्तम होगा ।
- हजारी समिति के प्रतिवेदन को मध्य प्रदेश ने स्वीकार करने में तत्परता दिखाई किन्तु अनुभव यह बता रहा है कि क्रियान्वयन में उतनी ही शिथिलता बरती जा रही है । अतः सहकारी साख की तीनों श्रेणियों का यथा—अल्पकाल, मध्यकाल तथा दीर्घकाल—का विलीनीकरण कर दिया जाना चाहिए ।
- सहकारी ऋण की वसूली, कृषकों और प्रदेश के कृषि विकास हेतु आवश्यक है । किन्तु वसूली के लिए अनुचित दबाव की अपेक्षा उचित वातावरण का निर्माण न्याय संगत होगा ।
- लघु सिंचाई योजनाओं पर दिए जाने वाले अनुदान की मात्रा को बढ़ाकर 50 प्रतिशत कर दिया जाए तो कृषकों की इस महत्ती योजना के प्रति जागरूकता बढ़ने लगेगी ।□

भूमि को भी रक्षा की जरूरत है

बी० बी० वोहरा

प्रचलित विश्वास के विपरीत भूमि कोई जड़ तत्व नहीं है, अपितु अनुपम जटिलताओं से भरपूर एक जीवित प्राणी की तरह है। उर्वर भूमि जीवन से भरपूर होती है और इसकी एक चम्मच भर मिट्टी में अरबों की संख्या में जीवित प्राणी होते हैं। भूमि में पाए जाने वाले सूक्ष्मतम जीव-जंतु और वनस्पति, वातावरणीय नाइट्रोजन वायु का निर्धारण करते हैं और जैव और अजैव पदार्थों को पौधों के साथ घुलमिल जाने के लिए उपयुक्त रूप प्रदान करते हैं। ये सूक्ष्म प्राणी, भूमि में विभिन्न स्तरों—भौतिक, रासायनिक, भू-वैज्ञानिक और शारीरिक—पर एक साथ चलने वाले अनिर्वचनीय जटिल कार्यों को भी पूरा करते हैं। संभवतः इसी से इस ग्रह पर लम्बे समय तक जीवन रहेगा।

ऐसे अद्भुत संसाधन का हर संभव तरीके से संरक्षण होना चाहिए। भूमि की देखभाल इसलिए भी होनी चाहिए क्योंकि इससे सभी प्रयोजन सिद्ध होते हैं और यह एक अद्वितीय और ऐसा संसाधन है जिसे दोबारा स्थापित नहीं किया जा सकता। एक इंच भूमि की सृजनशीलता 500 से लेकर 1000 वर्षों में बनती है।

यद्यपि भूमि बहुत सी मार सह कर भी बनी रह सकती है, तथापि इसका यह अर्थ नहीं है कि भूमि अनश्वर है। भूक्षरण और जल संचय भूमि के दो बड़े शत्रु हैं और इन दोनों से इसकी रक्षा करनी अनिवार्य है। इन्हीं शत्रुओं को सफलतापूर्वक न रोक पाने के कारण मेसोपोटामिया और उत्तरी अफ्रीका की सभ्यताओं का पृथ्वी पर से नामोनिशान मिट गया।

भूमिक्षरण

भूमिक्षरण या भूमि का कटाव पानी और हवा के कारण हो सकता है। साथ ही कृषि के अयोग्य भूमि पर से अंधाधुंध तरीके से पेड़ काटने और पशुओं को चराने का सीधा परिणाम भी भूमिक्षरण में ही अधिकतर होता है। इस प्रकार की भूमि का प्राकृतिक मूल आवरण पेड़ और घास यदि एक बार नष्ट हो जाएं तो भूमि की ऊपरी सतह को, जो बहुत उपजाऊ होती है, पानी आसानी से काट देता है, विशेषतः पहाड़ी इलाकों में।

यदि अनावृत्त जमीन सपाट और सूखी है तो उसमें तेज हवाएं आसानी से कटाव कर देती हैं। एक बार भूमिक्षरण शुरू होने पर दुश्चक्र शुरू हो जाता है। भूमि की ऊपरी तह नष्ट हो जाने के कारण उसकी वनस्पतियों को अधिक समय तक बनाए रखने की क्षमता घट जाती है, जबकि वनस्पतियां ही यह तत्व हैं जो आगे भूमिक्षरण को रोक सकती हैं।

महत्वपूर्ण बात यह है कि भूमिक्षरण को समय रहते ही रोका जाए। सौभाग्य से अंशतः क्षरणवाली भूमि को, उसके ऊपर पेड़-पौधे उगाकर अपेक्षाकृत कम समय में आगे होने वाले क्षरण से बचाया जा सकता है। आंशिक रूप से कटाव हुई भूमि पर पेड़-पौधे उगाकर यदि उसकी पशु तथा मनुष्य द्वारा पहुंचाए जाने वाले नुकसान से रक्षा की जाए तो वह शीघ्र ही क्षरण रोकने योग्य बन जाती है।

भूमि के पुनः उपजाऊ होने तक उसे आवश्यक सुरक्षा प्रदान करने के लिए कानूनी सहायता आवश्यक है। वैधानिक अधिकारों का प्रयोग इसलिए भी होना चाहिए कि भूमि की उपजाऊ क्षमता की सीमा के भीतर ही भूमि का उपयोग किया जाए। कानून तभी प्रभावी हो सकता है, जब स्थानीय लोग यह अनुभव करें कि ये प्रतिबंध अन्ततः उनके लाभ के लिए ही हैं। जब भूमि पर वनस्पतियों को बचाने की आवश्यकता हो तो उनकी ईंधन और चारे की समस्या का व्यावहारिक समाधान होना चाहिए। हालांकि बड़े पैमाने पर ये शर्तें लागू करना अत्यन्त कठिन है, लेकिन ऐसी भूमि को भूक्षरण से बचाना भी कोई आसान काम नहीं है।

भूमिक्षरण का दूसरा गम्भीर दुष्परिणाम हर वर्ष आने वाली विनाशकारी बाढ़ है। भू-क्षरण के कारण नदियों में रेत जमा हो जाती है जिसके परिणामस्वरूप गहराई कम हो जाने से पानी उफन कर दोनों किनारों पर दूर-दूर तक फैल जाता है। सिंचाई की नहरों और जलाशयों में समय से पूर्व रेत का जमा हो जाना एक गम्भीर समस्या है।

जलस्रोतों का नुकसान

भूमिक्षरण के उग्र परिणामों में से हमारे जल संसाधनों की बर्बादी एक है। वर्षा का पानी वनस्पतियों से आच्छादित भूमि की अपेक्षा अनाच्छादित भूमि पर अधिक तीव्र वेग से दौड़ता है। इस प्रकार बहुत सा भूजल समुद्र में बेकार चला जाता है।

आधे से अधिक क्षेत्र की सिंचाई कुओं आदि के द्वारा की जाती है और यदि इस तरह की सिंचाई के स्वरूप को भी आंका जाए तो यह दर और भी अधिक बैठती है। इस सन्दर्भ में यह बात

भी महत्वपूर्ण है कि सिंचाई प्रणालियों द्वारा जब शुष्क महीनों में पूरी रफ्तार से पानी खोला जाता है तो नदियों का बहाव तेज हो जाता है। वास्तव में बाढ़ और सूखा एक ही सिक्के के दो पहलू हैं और अकुशल भू-प्रबंध का परिणाम हैं।

पानी का ठहराव

पानी इकट्ठा होना और उसकी वजह से भूमि में लवण जमा हो जाना भूमि को नुकसान पहुंचाने वाले दूसरे महत्वपूर्ण कारण हैं। पानी इकट्ठा होने का मुख्य कारण पर्याप्त नालियों का अभाव है और इसी के परिणामस्वरूप भूगर्भीय पानी का स्तर बढ़कर फसल की जड़ों तक पहुंच जाता है। अनेक भीतरी क्षेत्रों में निचली भूमि और उसके साथ ही नदी के मुहानों तथा तटवर्ती क्षेत्रों में पानी की अवरूद्धता के कारण इन क्षेत्रों में कभी भी उत्पादन नहीं होता। कुछ क्षेत्र तो ऐसे हैं जहां अभी हाल तक पैदावार होती थी, परन्तु मानव-निर्मित गलत परिस्थिति के कारण वहां जलावरोध होने लगा।

यदि बाढ़-नियंत्रण पुश्तों तथा सड़क, रेल और नहर के पुश्तों पर जल निकास की पर्याप्त व्यवस्था न हो तो वहां पानी भर जाता है और निकटवर्ती इलाकों में बाढ़ आ जाती है। इसका सामान्य हल यही है कि अतिरिक्त जल निकासी के लिए पर्याप्त नालियां आदि बनाई जाएं, हालांकि यह काफी खर्चीला है।

नहर द्वारा सींचे जाने वाले क्षेत्रों की स्थिति दूसरे प्रकार की है और कहीं ज्यादा खतरनाक है। यह भूमि प्रायः सपाट होती है और यदि इसमें प्राकृतिक जल निकासी की व्यवस्था न हो तो सिंचाई के लिए छोड़ा गया पानी इकट्ठा हो जाता है और बहुत समय तक भरा रहता है। यह प्रक्रिया अन्य दो प्रकार से गड़बड़ करती है। फसलों को दिया जाने वाला नहर का पानी प्रायः उनकी आवश्यकता से अधिक होता है। और जब नहर तथा जल नालियां पक्की नहीं होतीं तो उनमें रिसाव होने से पानी इकट्ठा हो जाता है।

नहर द्वारा सींचे जाने वाले क्षेत्रों में पानी के ठहराव की समस्या का समाधान नहरों तथा जल वितरिकाओं को पक्का करना, भूमि में आवश्यकतानुसार पानी की सप्लाई करने के लिए सिंचाई नियंत्रण व्यवस्थाओं को सुधारना और अन्त में पर्याप्त जल निकासी की व्यवस्था करना है।

अन्य संकट

भूमि के लिए दो अन्य संकट हैं। एक तो उत्तम कृषि योग्य भूमि को शहरी प्रयोग के लिए रूपान्तरित किया जाना जबकि द्वितीय श्रेणी की भूमि पर भी आसानी से यह विस्तार किया जा सकता है और और दूसरे गहन जुताई में भूमि के सूक्ष्म तत्वों तथा अन्य पौष्टिक तत्वों को क्षीण करना। पहली समस्या प्रभावी नगर आयोजन और दूसरी समय-समय पर मिट्टी की जांच करके सुलझाई जा सकती है।

कृषि विशेषज्ञों से यह पता चला है कि 560 लाख हेक्टेयर भूमि ऐसी है जिस पर कमोबेश कोई वनस्पति नहीं उगाई जाती है। इसमें 130 लाख हेक्टेयर भूमि स्थायी चरागाह है। 170 लाख हेक्टेयर भूमि ऐसी है, जो परती है किन्तु जिस पर खेती की जा सकती है और 260 लाख हेक्टेयर भूमि परती है। कृषि विशेषज्ञों से यह भी पता चला है कि 700 लाख हेक्टेयर भूमि पर कहने को तो जंगल लगाए गए हैं किन्तु इसमें से आधी से भी कम भूमि पर वास्तव में पेड़ लगे हैं। इसका अर्थ है 900 लाख हेक्टेयर (कुल भूमि क्षेत्र की 30 प्रतिशत भूमि) हमारे यहां बेकार पड़ी है। उचित प्रबन्ध होने से इन क्षेत्रों में कई किस्म के पेड़ और घास उगाए जा सकते हैं और यह देश की अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण योगदान होगा।

कम से कम 120 लाख हेक्टेयर भूमि ऐसी है जिसमें पानी भर जाता है या जो क्षारयुक्त है, इसमें से 60 लाख हेक्टेयर भूमि पर एक बार उत्पादन होता था। राष्ट्रीय बाढ़ आयोग की रिपोर्ट से, जो इस वर्ष मार्च में प्रस्तुत की गई, पता चला है कि 400 लाख हेक्टेयर क्षेत्र में बार-बार बाढ़ आती है जबकि एक दशक पहले केवल 200 लाख हेक्टेयर क्षेत्र बाढ़ की चपेट में आता था।

वर्ष 1976, 1977 और 1978 में बाढ़ों के कारण 3180 करोड़ रुपये की हानि हुई। □

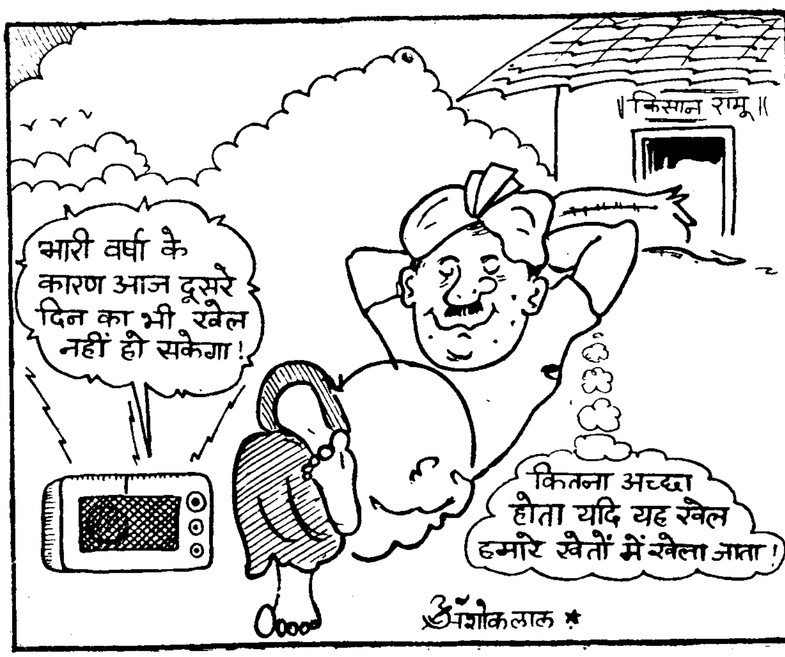

सीमाहीन

विमला रस्तोगी

ऋचा तुम मेधा के क्रियाकलाप देख रही हो न। सनकी हो गई है, कुछ न कुछ बड़बड़ाती रहती है। खाना खाएगी तो खाती चली जाएगी या कई-कई दिन नहीं खाएगी और कहेगी---मैं बच्चे लिए व्रत रख रही हूं। कभी दिन में तीन-चार बार नहाएगी और कभी दो दिन तक नहीं नहाएगी। देखो न अभी नहाकर आई थी और फिर नहाने चली गई।

राजीव बराबर वाले मकान की खिड़की से अपनी पत्नी ऋचा को मेधा के क्रियाकलाप दिखा रहा था, "जानती हो ऋचा मेधा की इस हालत के लिए इसकी कर्कशा सास जिम्मेदार है।"

मेधा ! राजीव के अभिन्न मित्र सतीश की पत्नी। सन्तानाभाव से सन्तप्त मेधा, सास, ननद, देवरानी के व्यंग्यवाणों से घायल, उपेक्षिता मेधा, पति का सिरदर्द, घरवालों का बोझ मेधा ! और आज से सात वर्ष पूर्व यही मेधा रूप राशि का भंडार थी। दुल्हन के लिबास में धीरे-धीरे घर में कदम रखते-रखते ही उसने बारात की खातिर की तथा अपनी कई तारीफें सुनी थीं। उफ ! इन सात वर्षों में क्या से क्या बन गई मेधा। आसमान से पाताल में चली गई मेधा।

"अरे ! अभी तक नहाकर नहीं निकली ?" ऋचा का आश्चर्य मिश्रित स्वर।

"मेधा की मानसिक स्थिति ठीक नहीं है। मैं तुमसे कह चुका हूं कि मेधा भाभी को पागलखाने जाने में ज्यादा समय नहीं लगेगा। उसे बचा लो ऋचा। एक मासूम बेगुनाह जिन्दगी को बरबाद होते मुझसे नहीं देखा जाता। अभी समय है। मेधा का मानसिक सन्तुलन वापस आ सकता है। मेरी बात पर गौर करना।" ऋचा चुपचाप सुनती रही।

मेधा के सीधेपन ने उसे ऐसे कगार पर लाकर खड़ा कर दिया जहां वह स्वयं अपनी भी न रही। व्यंग्य, कटाक्ष, हीनता, डाह, ईर्ष्या, उपेक्षा और एकाकीपन के भंवर में उसके मस्तिष्क की नैया लगभग डूब गई।

मेधा के विवाह के एक वर्ष बाद ही उसके दुकानदार देवर का विवाह हुआ। विवाह के दो महीने बाद ही देवरानी का पांव भारी हो गया। फिर क्या था, वह सास की निगाह में चढ़ गई, सास ने उसके चोंचले शुरू कर दिए और सारे काम का बोझ मेधा पर डाल दिया। मेधा तब भी खुश रही। शिशु जन्म से पूर्व देवरानी के निखरे रूप-सौन्दर्य की सास खूब प्रशंसा करती, "छोटी बहू का रूप-रंग देखो कैसे खिलके आया है। उससे कई बार कहा सबके सामने न निकलाकर कहीं नजर न लग जाए। एक बड़ी को देखो खाने-पीने में नखरे करती है। जब खाएगी नहीं तो पनपेगी कैसे ?" मेधा का दिल हुआ कि चीखकर कहे, "काम का आधिक्य, थकान और ठंडा-बासी खाना। कैसे खाया जाए पेट भरके।" शब्द होंठों पर अटक कर रह गए। सूखे होंठों पर जीभ फेर कर वह सारी कड़वाहट पी गई। रात के दस बजे काम से निबटने पर न उसकी धोती बदलने की इच्छा होती न कंघी करने की और सुनना पड़ता पति का उलाहना---"कैसे रहती हो ? सलीके से रहना नहीं जानतीं। तुम्हें देखकर कोई कह सकता है कि शादी को एक वर्ष हुआ है।" जवाब में अपनी सफाई देने की इच्छा वह हर बार दबा जाती।

एक दिन मेधा ने साहस कर पति से अपनी व्यथा कही तो सिर मुंडाते ओले पड़ गए। "ऐसा कौन सा बड़ा भारी काम है घर में जो इतनी थक जाती हो ? छोटी काम करने की स्थिति में नहीं है, मां उससे कैसे काम कराए। यदि तुम उस स्थिति में होती तो मां से तुम्हारी कोई सिफारिश कर सकता था।" मेधा सारी रात चुप-चाप आंसू पीती और पोंछती रही। कितना बुरा है उसका नसीब। बचपन में ही मां-बाप नहीं रहे। चाचा ने पिता की जायदाद के लालच में उसका पालन-पोषण किया। उसकी शादी करने के बाद भी काफी जायदाद बच गई। मेधा ने ससुराल में किसी को यह बात न बताई, क्या करती बता कर ? चाचा की नीयत को वह जानती थी। शादी पर चाचा ने स्कूटर देने का वादा किया था, दिया अब तक नहीं। वह जान रही थी कि स्कूटर न देने के चर्चे घर में सरगर्मी पर हैं। उसकी दोनों ननदें हमेशा आग में घी का काम करतीं। मेधा ने अपने सीधेपन से हमेशा दुख ही उठाया।

देवरानी के लड़का हुआ। खूब खुशियां मनाई गई। मेधा भी खुश हुई। पर खुशियों के उस हुजूम में उसने अपने को नितान्त अकेला और अस्तित्वहीन पाया। वह कोई भी रीति-रिवाज निगाहें भर कर न देख पाई। बस आदेशों का मशीनवत पालन करती रही। मातृत्व से मंडित होना नारी के लिए कितना आवश्यक है इस शाश्वत सत्य की महत्ता मेधा अच्छी तरह समझ गई। पति की निगाह में भी वही पत्नी चढ़ती है। जीवन की इस रिक्तता का अहसास मेधा बुरी तरह करती। लेकिन उसके बस में क्या था ? डाक्टरों के सहारे से भी कोई लाभ न हुआ। सास को सारी कमी बहू में नजर आती।

सास-ननद की लाड़भरी शह पाकर छोटी के हौसले बढ़ रहे थे। देवर की दुकान अच्छी चल रही थी। वह मां-बहनों की इच्छानुसार सभी वस्तुएं लाता रहता। आफिस से बंधी तनख्वाह पाने वाला सतीश मां-बहन की

इच्छाएं पूरी नहीं कर पाता। सतीश बचत कर बैंक में बहनों की शादी हेतु जमा करता था, पर उसने किसी से कहा न था। सास-ननद के दिल में यह बात बैठ गई कि मेधा सतीश को खर्चा करने के लिए मना करती है। अल्पभाषी मेधा का स्वभाव बहस का न था।

बड़े लड़के के डेढ़ वर्ष बाद ही छोटी ने दूसरे लड़के को जन्म दिया। उसके गुण और भी गाए जाने लगे। पास-पड़ौस की औरतें पूछ-पूछ कर सास की जबान को तेज और मेधा के दुख को गहरा बनातीं। "अरे वह तो कोखजली है, न जाने पहले जन्म में कौन से पाप किए थे जो मेरा बेटा भी इसी ग़म में घुला जा रहा है।"

"अरे भगवान बड़ी को एक लड़की ही दे देता।"

"लड़की क्या? वह चूहे का बच्चा भी नहीं जन सकती।"

मेधा पिघले सीसे सा सब कानों में उतारती रही। कितना शौक था मेधा को बच्चों का। क्या मालूम था प्रेम के अथाह सागर में भगवान पीड़ा का जहर घोल देंगे। ममता के बगीचे में एक फूल भी नहीं खिलेगा। दुनिया में कितनी नाजायज़ सन्तानें इधर-उधर फेंक दी जाती हैं और वह एक बच्चे को तरस रही है।

"छोटी के लड़के भी अपने ही हैं" सोचकर उसने अपने मन को समझाया और सास के सामने अपने मनोभावों को रखा, वह फट पड़ी—

"अरे अच्छे करम किए होते तो भगवान यों निपूती न रखता, अपनी मनहूस छाया भी इन बच्चों पर न डाल।"

मेधा का रोम-रोम पीड़ा से कराह उठा मानों कोई भारी पत्थर उसकी छाती पर रख दिया गया हो। उसने नीतू और भोलू को न छूने का प्रण लिया, पर ममता से भरे दिल ने प्रण तुड़वा दिया। मेधा बच्चों को देखकर स्वयं पर काबू न कर पाती। सास की चोरी से बच्चों को खिलाने लगी। जलती-धधकती छाती पर बच्चे रूपी रूई के फाहे भी उसे ज्यादा दिन मयस्सर न हुए। पड़ौस की काकी ने सास व छोटी के मन में यह बात बिठा दी कि बांझ औरत पर किसी का साया रहता है, बच्चों को उससे एक-दम अलग रखना चाहिए। सबकी निगाहें इसी चौकसी

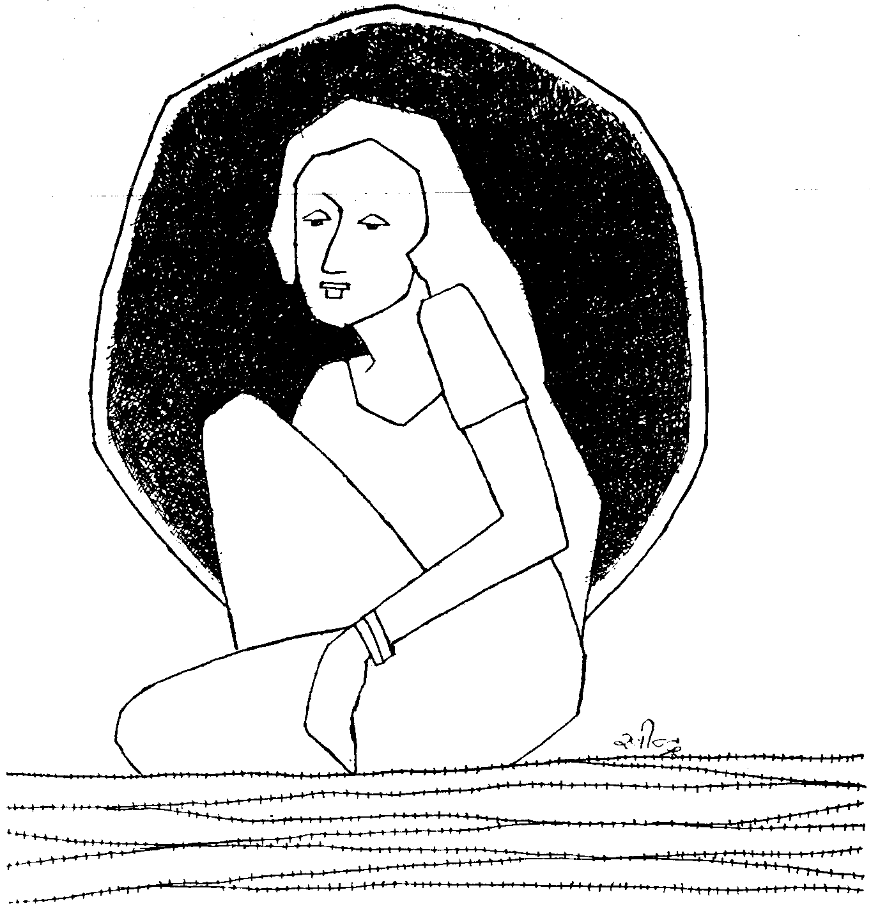

में रहती कि मेधा बच्चों से बोलना तो दूर उन्हें छूने तक न पाए।

एक दिन भोलू को अकेला पाकर मेधा अपने कमरे में ले गई। प्यार से थपका कर चूम-चाट कर उसे सुला दिया। इतने में ही ननद रानी आ गई—

"तुमने भोलू को यहां सुला रखा है। नीचे सब जगह ढुंढावा पड़ा है। महारानी से बताया भी न गया।"

"यहां सुनाई नहीं आई।"

"कानों में रूई ठूंसे न रहा करो। नीचे जाकर नाश्ते की तैयारी करो।" ननद ने सोते भोलू को गोद में उठा लिया। "आइन्दा किसी बच्चे को अपने कमरे में लाने की हिम्मत न करना", सास ने नीचे से कहा। सकपकाई सी मेधा सिर झुकाए नीचे चली आई।

एक दिन नीतू खेलते-खेलते मेधा के कमरे में आकर उससे बातें करने लगा। मेधा ने उसे टाफी दे दी। तभी छोटी आ पहुंची।

"तुम इसे खाने को कुछ मत दिया करो जिस दिन भी बच्चे तुम्हारे कमरे में आते हैं उन्हें कुछ हो जाता है।"

"शान्ता!" मेधा का आश्चर्य भरा स्वर।

"सच कड़वा होता है, बर्दाश्त करने की हिम्मत होनी चाहिए। नीतू नीचे चल, फिर कभी यहां आया तो टांगे तोड़ दूंगी।" गुस्से में नीतू को घसीटती छोटी नीचे चली आई। मेधा धम से जमीन पर बैठ गई। कमरा, दीवारें, घर सब घूम रहे थे। मेधा के जज्बातों पर एक न एक पत्थर रोज ही पड़ता। बड़ी हिम्मत जुटाकर उसने सतीश से कह दिया—

"अब मुझसे बर्दाश्त नहीं होता कोई सीमा होती सहने-सुनने की भी। ये लोग मुझे चुड़ैल समझने लगे हैं," मेधा फफककर रो पड़ी।

"तुम्हारी तरफ से मेरा बोलना ठीक न रहेगा, उल्टे तुम्हें मिलने वाले तानों में वृद्धि ही होगी।"

"कुछ भी करो मेरे दिल-दिमाग पर गहरा सदमा है, कहीं मानसिक सन्तुलन न खो बैठूं। आप अपना ट्रांसफर करा लो।"

"कोशिश करूंगा।"

छोटी ने तीसरे लड़के को जन्म दिया। छोटी लड़कों को जन्म देकर सबकी निगाह में चढ़ती ग्रौर मेधा चूल्हे चौके में खटती जाती थी।

"ग्ररी वह तो बांझ है बांझ" सास किसी को मेधा का परिचय दे रही थी। मेधा रसोई घर में थी। बांझ शब्द सुनते ही उसके हाथ से दूध का भगोना छूट गया। सास बिफर पड़ी, "कम्बख्त दूध गिरा दिया। बच्चे क्या पिएंगे? हाथ धोकर बच्चों के पीछे पड़ गई है। मां–बाप भी नहीं हैं जो मायके भेज दो, चाचा ने भी शादी करके नाम नहीं लिया।" सास देर तक कड़वाहट उगलती रही, मेधा सहती रही। ग्रतृप्ति, उपेक्षा, उदासीनता, हीनता तथा भय के दबाव में मेधा धीरे-धीरे ग्रपना मानसिक सन्तुलन खो बैठी।

*   *   *

"सतीश बाबू भी दोषी हैं उन्हें मेधा से प्यारभरी सहानुभूति रखनी चाहिए थी" ऋचा ने राजीव से कहा।

"सतीश ग्रब गलती स्वीकारता है। मेरा यहां से ट्रांसफर न हुग्रा होता तो मेधा भाभी का यह हाल न होता। सतीश ग्राफिस के बाद भाई की दुकान पर बैठ जाता। रात को थक कर सो जाता।"

"बेचारी मेधा भाभी····" ऋचा ने लम्बी सांस भरते हुए कहा।

"ऋचा हम ग्रपनी गुड़िया देकर ही उनकी जान बचा सकते हैं। डाक्टर ने भी यही सुझाव दिया है।"

"लेकिन···"

"तुम तो उसे दूध भी नहीं पिलातीं।"

"मैं ग्रपना दिल पक्का नहीं कर पा रही, किसी ग्रनाथालय से···"।

"ऋचा··· जरूरी नहीं ग्रनाथालय में इस समय इतना छोटा बच्चा हो। हम ग्रपनी गुड़िया देकर उनके घरवालों की ग्रांखें खोलना चाहते हैं। तुम्हारे लाड के लिए हमारे ग्रौर भी दो लड़कियां हैं।"

"तुम लड़कियों से घबरा गए।"

"ऋचा! बेकार की बातें न करो" राजीव का स्वर कठोर था। "मैं गुड़िया को लेकर सतीश के घर जा रहा हूं" उसने ग्रावेश में ग्रपनी ढाई महीने की बच्ची को गोद में उठाया ग्रौर घर से बाहर निकल गया। ऋचा 'सुनिए तो' 'सुनिए तो' कहती रह गई।

सतीश घर पर ही था। "मेधा भाभी देखो मैं तुम्हारे लिए तोहफा लाया हूं नन्ही सी प्यारी गुड़िया।"

"गुड़िया··· दूर रखो बच्चों को। मैं बांझ हूं, चुड़ैल हूं···इसे कुछ कर दूंगी··· ग्रा···हा···हा।"

"नहीं भाभी तुम बिल्कुल ठीक हो, मैं··· मैं हूं सतीश का दोस्त राजीव।···"

"रा···जी···व, बड़ी देर कर दी ग्राने में···।"

"हां, भाभी मेरा ट्रांसफर ग्रासाम हो गया था। मुझे यहां ग्राए 15 दिन हुए हैं।"

मेधा ग्रजीब नजर से राजीव को घूरने लगी।

"मेधा यह हमारी बच्ची है। तुम इसकी मां हो, तुम्हें ग्रपनी बच्ची का भी ख्याल नहीं रहता" सतीश ने समझाया।

"हां तुम इसकी मां हो भाभी", राजीव का स्वर था।

"मां···मैं···क्या मैं मां बन सकती हूं"। मेधा के चेहरे पर ग्राई मुस्कान ने राजीव ग्रौर सतीश के हौसले बढ़ा दिए। किन्तु एकाएक मेधा चीखी—"नहीं··· नहीं" ग्रौर बेहोश हो गई।

"मैं डाक्टर को बुलाता हूं"—जाते हुए सतीश को राजीव ने रोक दिया।

"चिन्ता की बात नहीं है सतीश, मेधा भाभी को जल्दी होश ग्रा जाएगा। मुझे विश्वास है। इस बेहोशी के बाद इसकी हालत ठीक होगी, काश तुमने मेधा भाभी की भावनाग्रों को पहले समझा होता।" कहकर राजीव ने बच्ची को मेधा के पास लिटा दिया। बीच-बीच में बच्ची रोती। बच्ची का रुदन मेधा की मस्तिष्क-शिराग्रों में तैरता। मस्तिष्क में झंकार सी होती। राजीव ठंडे पानी के हल्के छींटे मेधा के चेहरे पर डाल रहा था। होश ग्राने पर मेधा चिल्लाई "बच्ची···बच्ची··कहां है मेरी बच्ची?"

"यह रही भाभी। इसका नाम गुड़िया है।"

ममता के ग्रतिरेक में डूबी मेधा ने बच्ची को सीने से लगाया ग्रौर ग्रावेश में चूमने लगी। चिर तृषित हृदय पर वह नन्ही सी जान फव्वारे का काम कर रही थी। इतने में ही ऋचा ग्रा गई। मेधा की छाती से चिपटी गुड़िया को देखकर उसकी छाती शीतल व ग्रांखें नम हो गईं। "मुबारक हो भाभीजी। बड़ी प्यारी बच्ची है" ऋचा ने धीरे से राजीव से कहा—"ग्रच्छा हुग्रा ग्रापने सख्ती से काम लिया। मेरा दिल कमजोर हो रहा था।

"सतीश नीचे ग्राग्रो" कठोर स्वर था मां का। ग्रादेश का पालन हुग्रा। "सतीश यह मैं क्या सुन रही हूं तू एक कायस्थ की लड़की को ग्रपने घर रखेगा, तेरी बुद्धि पर पत्थर पड़ गए हैं। हम ब्राह्मणों में श्रेष्ठ ग्रौर वह कायस्थ। मैं यह नहीं होने दूंगी।"

"मां उसने मरणासन्न मेधा को नई जिन्दगी दी है तुम····।"

"ज्यादा मत बोल। इस लोक में तो तूने मुझे कुछ सुख दिया नहीं, परलोक भी खराब कर रहा है। राजीव को मैं खूब जानती हूं उसने लव मैरिज की थी। न जाने किस-किस का खून···"

"मां जी···" राजीव का स्वर था "हिन्दू-मुसलमान, ब्राह्मण-ईसाई हर बच्चे को भगवान बनाता है। एक जिन्दगी को चलती-फिरती लाश बना देना कहां का धर्म है, न्याय है? हर धर्म डूबते को सहारा देने की शिक्षा देता है। जिस धर्म में···"

"धर्मों का व्याख्यान किसी ग्रौर को सुनाना।"

"तुम ही धर्माधिकारी बन रही हो मां। तुम सबके उपेक्षित व्यवहार ने मेधा भाभी को पागल बनाने में कोई कसर न छोड़ी थी। जरा उस ग्रौरत का दिल देखो जिसने ग्रपने कलेजे का टुकड़ा एक जिन्दगी की खातिर दे दिया।"

"मां राजीव ठीक कह रहा है।"

"सतीश तू ग्रौर सोच ले मैं कहे देती हूं कि···"

"मैंने सोच लिया है मां," सतीश की कष्ट-साध्य चुप्पी टूट चुकी थी। "मैं मेधा को दोबारा मौत के मुंह में नहीं जाने दूंगा।"

"मैं तुम्हारे हाथ का पानी भी नहीं पिऊंगी।'

"तुम्हारी मर्जी। हम ग्रलग मकान लेकर रह लेंगे।" सतीश के स्वर में ग्रात्मविश्वास था।

[शेष पृष्ठ 27 पर]

दीपावली

दीपक जले करोड़ों,
नव चेतना लुभाई
दीपावली सुहाई।

जो दीप जल उठे हैं
उनमें नई लगन है,
हिम्मत बढ़ा हृसके, उस
अभियान की अगन है।

उल्लास की सुनहली
किरणें अनन्त छाईं
दीपावली सुहाई।

प्रत्येक दीप सबको
नव ज्योति दे रहा है,
तम-सिंधु में विजय की
ज्यों नाव खे रहा है।

आई जहां समस्या,
श्रम ने अलख जगाई
दीपावली सुहाई।

ये दीप जिन्दगी भर
उपकार बांटते हैं,
ये मेल-जोल का नव
सहकार बांटते हैं।

युग-मार्ग में इन्होंने,
दृढ़ एकता दिखाई
दीपावली सुहाई।

जगदीश चन्द्र शर्मा

ज्योति नव जलं

अंधकार दूर हो, ज्योति नव जले
तमसो मा, ज्योतिर्गमय।
सृष्टि के विकास में
ज्योति जो जली,
विश्व अंधकार को
चीरती चली।
मानवी धर्म के प्रकल्प थे चले।
तेज पर धुंध की
छाप जब पड़ी,
प्राणदा वायु से,
लग गई झड़ी।
समन्वयी-वृत्ति के प्रयास हैं भले।
अंधकार जब बढ़े
कोसते रहे।
हो प्रकाश किस तरह
न सोचते रहे।
स्वयं एक दीप बनें, यही कार्य पहले।
एक दीप भी सदा
प्रकाश है बिखेरता,
एक है चन्द्रमा
एक सूर्य देवता।
दीप दीप से जले, गहन तिमिर टले।

कृष्ण नारायण पाण्डेय

सौराष्ट्र कीप्राण वायु : मूंगफली तेल उद्योग

आर० जयन्त

हमारे कृषि प्रधान देश की पैदावार में गुजरात का अपना एक विशेष महत्व रहा है। समग्र देश की मूंगफली की उपज में 30 प्रतिशत केवल गुजरात में ही होता है। देश के 12 राज्यों में मूंगफली की वार्षिक उपज 55 से 65 लाख टन होती है जिसमें से केवल गुजरात में 20 लाख टन से भी अधिक पैदावार होती है। अधिकांशतः यह पैदावार गुजरात के सौराष्ट्र क्षेत्र में होती है। अनुमान है कि देश में 1800 करोड़ रुपयों की मूंगफली की उपज में से 600 करोड़ रुपयों की उपज सौराष्ट्र में होती है। ग्रीष्म तथा शीत दोनों ऋतुओं में इसकी फसल ली जाती है।

सौराष्ट्र के जूनागढ़ जिले में 3,60,000 टन, जामनगर में 2,60,000 टन, अमरेली में 1,75,000 टन, सुरेन्द्रनगर में 60,000 टन, राजकोट में 2,75,000 टन, भावनगर में 1,80,000 टन तथा गुजरात में के अन्य क्षेत्रों में 1,80,000 टन मूंगफली की उपज होती है।

इसके परिणामस्वरूप गुजरात में विशेषकर सौराष्ट्र क्षेत्र में मूंगफली के तेल का उद्योग बहुत अधिक विकसित हुआ है। मूंगफली में से खाद्य तेल, खली, खली पाउडर आदि उत्पादित होते हैं। मूंगफली पीलने के लिए तकरीबन 60 करोड़ रुपये की पूंजी की 1100 तेल मिलें काम कर रही हैं। सौराष्ट्र की 40 सोलवंट एक्सट्रेक्शन मिलें खली में से तेल निकालने तथा आयल केक बनाने का काम करती हैं। इन मिलों में 30 करोड़ रु० की पूंजी लगी हुई है।

खली का यह पाउडर (आयल केक) निर्यात भी किया जाता है। 1969-70 में 5,48,000 टन खली पाउडर का विदेशों को निर्यात हुआ था, जबकि 1976-77 में यह निर्यात बढ़कर 12,48,000 टन हो गया था। 1978-79 में 6 लाख टन आयल केक का निर्यात किया गया। वनस्पति बनाने के लिए अन्य देश इसका आयात करते हैं। वैसे सौराष्ट्र में वनस्पति घी बनाने के 7 कारखाने हैं किन्तु वनस्पति घी में मूंगफली के तेल का उपयोग करने पर प्रतिबंध लगने के कारण यह निर्यात किया जाता है। निर्यात से सरकार को प्रति टन 125 रुपये का निर्यात कराधान प्राप्त होता है।

400 किलो मूंगफली का वर्तमान बाजार भाव 1,350 रुपयों के आसपास है। गुजरात सरकार को मूंगफली, तेल, खली तथा छिलकों आदि की खरीद या विक्रय पर 4 प्रतिशत की कर राशि प्राप्त होती है। इस हिसाब से 1,350 रुपयों की एक खंडी पर 54 रुपये खरीद कर, 51 रु० 20 पैसे तेल विक्रय कर, 5 रु० 12 पैसे सरचार्ज, 9 रुपये 68 पैसे विक्रय कर, अन्य 32 पैसे मिलाकर 120 रु० 32 पैसे कराधान प्राप्त होता है। इस हिसाब से राज्य सरकार को मूंगफली की बिक्री आदि से 50 से 60 करोड़ रुपयों की सालाना आमदनी होती है। इसी प्रकार इस उद्योग से प्राप्त खली पाउडर के निर्यात से भारत सरकार को भी करोड़ों रुपयों का राजस्व प्राप्त होता है।

गुजरात की अर्थव्यवस्था पर सौराष्ट्र की मूंगफली की पैदावार का प्रभाव पड़ने के साथ ही मूंगफली तेल के व्यापार का समग्र देश पर भी प्रभाव पड़ता है। जब भी मूंगफली की पैदावार कम होती है, कृषि को नुकसान होता है, तेल का उत्पादन कम होता है या अन्य राज्यों तक तेल नहीं पहुंच पाता तब केवल गुजरात ही नहीं अन्य राज्यों के तेल बाजारों में भी हलचल सी मच जाती है। कृषक खाद के बढ़ते दाम तथा अन्य कारणों से अपनी उपज के दाम अधिक मिलने का तकाजा करते हैं, जबकि लोग कम दाम में या उचित दामों में ही तेल प्राप्ति की आकांक्षा रखते हैं।

अभी कुछ समय पहले तेल के बढ़ते हुए दामों को रोकने के लिए गुजरात सरकार ने अस्थायी तौर पर निर्यात परमिट के कुछ नियमों की घोषणा की थी। निर्यात के इन नियमों के कारण मुनाफाखोरों पर प्रभाव पड़ने के साथ-साथ अन्य राज्यों में भी तेल के दाम आसमान को छूने लगे। सरकार राशन कार्डों पर आम लोगों को तेल का कुछ हिस्सा कम दामों पर वितरित करना भी चाहती थी। अतः तेल मिल वालों से बातचीत की गई और स्थानीय बाजार भाव तथा अन्य राज्यों के बाजार भाव को बढ़ने से रोकने के लिए तथा लोगों को कम दाम में तेल का कुछ हिस्सा देने के लिए मध्यवर्ती मार्ग निकाला गया।

फलस्वरूप 15 जुलाई तक तेल का जो भंडार था उसका 50 प्रतिशत यानी आधा हिस्सा तेल मिल मालिकों ने स्वेच्छा से सरकार को देने की अपनी सहमति प्रदर्शित की। तदनुसार 10 हजार टन तेल 8 रुपये प्रति किलो के भाव से सरकार मिल वालों से खरीदेगी और उसे राशन कार्डों पर आम लोगों के बीच वितरित कर देगी।

शेष 50 प्रतिशत तेल में से मिल वाले 20 प्रतिशत स्थानीय खुले बाजार में बेच सकेंगे और प्रत्येक डिब्बे का भाव अधिक से अधिक 165 रुपये होगा। शेष 30 प्रतिशत तेल गुजरात के बाहर अन्य राज्यों में निर्यात किया जा सकेगा ताकि अन्य राज्यों में भी तेल की सप्लाई बनी रहे तथा भावों को स्थिर रखा जा सके।

15 जुलाई के बाद उत्पादित तेल का 60 प्रतिशत मिल वाले गुजरात के खुले बाजार में बेच सकेंगे जिसका अधिकतम भाव 165

रुपये होगा। वे 40 प्रतिशत का अन्य राज्यों में निर्यात कर सकेंगे।

गत वर्ष श्रावण के त्योहारों के दौरान तेल के एक टिन का भाव बढ़कर 200 रुपये तक पहुंच गया था जबकि इस वर्ष 160 से 165 रुपये तक भाव टिकाया जा सका है और 165 रुपये से अधिक भाव नहीं बढ़े। नए निर्णयानुसार पुराने टिन के साथ 15.5 किलो के टिन का भाव 165 रुपये, नए टिन के साथ 173 रुपये तथा 16 किलो के नए टिन के साथ 178 रुपये अधिकतम भाव निर्धारित किया गया है।

सरकार लेवी के तौर पर 50 प्रतिशत का जो हिस्सा मिल वालों से प्राप्त करेगी वह 10 हजार टन तेल राज्य के 2 करोड़ 80 हजार राशन कार्डधारियों के बीच 8.60 रुपये प्रति किलो के हिसाब से बांट दिया जा जाएगा।

तेल मिलरों की तरह सहकारी संगठनों से भी स्वैच्छिक तौर पर तेल प्राप्त करने के प्रयास किए जा रहे हैं।

वैसे इस साल मूंगफली अधिक मात्रा में बोई गई है और वर्षा भी अच्छी होने के कारण केवल सौराष्ट्र क्षेत्र में ही 18 लाख टन मूंगफली की उपज होने की संभावना है तथा अन्य तिलहनों सहित गुजरात भर में 23 लाख टन तिलहन उपज की संभावना है।

मूंगफली की उपज को नुकसान से बचाए रखने के लिए भी कई वैज्ञानिक उपाय किए जा रहे हैं। कीटाणुनाशक दवाइयों के छिड़काव हेतु कृषकों को आर्थिक सहायता भी दी जा रही है तथा अधिक उपज के लिए वैज्ञानिक और आधुनिक उपाय किए जा रहे हैं।

मूंगफली तेल का उद्योग गुजरात, विशेष कर सौराष्ट्र क्षेत्र के लिए प्राण वायु के समान है। □

टमाटर की लाली लाई खुशहाली

टमाटर की खेती ने उदयपुर जिले के गारियावास गांव के निवासियों के दिन बदल दिए हैं। जिले के भींडर विकास खंड के इस पिछड़े हुए गांव की काया पलटने का सारा श्रेय वहां के युवा किसान भाना राम को है जिनकी कल्पनाशीलता और उपलब्ध सुविधाओं के उपयोग से यह संभव हो सका।

गारियावास के किसान हमेशा से खेती करते आ रहे थे लेकिन उनकी माली हालत जहां की तहां थी। कुछ दिनों पहले भाना राम को जिले के ही दूसरे गांव बारी जाने का मौका मिला। वहां उसने पाया कि कुछ किसान अन्य फसलों के साथ एक फसल टमाटर की भी उगाते हैं। उन्हें उससे काफी आय हो जाती है। भाना राम ने भी इसे अपनाने का निश्चय कर लिया। वहां से भाना राम उदयपुर गया। वहां विश्व विद्यालय के शिक्षा विस्तार निदेशालय से टमाटर की खेती के बारे में विस्तृत जानकारी एकत्र की। लौटने से पहले उदयपुर से टमाटर के बीज भी खरीद लिए।

कुछ नया काम करने की लगन और उत्साह से भरा भाना राम गांव लौटा। शुरू में उसने केवल एक बीघे में ही टमाटर बोए। फसल तैयार होते-होते उसने टमाटरों को बाहर भेजने का भी प्रबंध कर लिया। शीघ्र ही उसे सौ रुपये रोज की आमदनी होने लगी। भाना राम का उत्साह अब दुगुना हो चुका था। अगले वर्ष और अधिक खेतों में टमाटर बोने की तैयारी में वह अभी से लग गया।

देखादेखी गांव के और किसानों ने भी टमाटर की खेती शुरू कर दी। इसी बीच उदयपुर जाने वाली मुख्य सड़क के साथ गांव को पक्की सड़क से जोड़ दिया गया। गांव के टमाटरों को तत्काल बाहर भेजने की भी सुविधा हो गई। और अब टमाटर की खेती पूरे गांव में खुशहाली ले आई है। □

[पृष्ठ 24 का शेषांश]

"मैं सब समझती हू। इस राजीव के बच्चे ने तुझे सिखाया है। वरना तेरी इतनी हिम्मत कहां?"

"मां। इसे दोष न दो, यह मेरे लिए देवदूत है। मेरी गुमराह जिन्दगी को नई दिशा दी है इसने।"

"मां जी। दुनिया चांद तक पहुंच गई और आप उन्हीं दकियानूसी विचारों में जकड़ी हैं। याद रखिए सबसे बड़ी जाति है मानव जाति, सबसे बड़ा धर्म है मानव धर्म, सबसे बड़ी सेवा है मानव सेवा। इनके साथ कोई सीमा लागू नहीं होती। ये सीमाहीन हैं" राजीव की तर्कसंगत बात को सतीश की मां ने मुंह बनाकर सुना।

हठधर्मी मां से मजबूर होकर सतीश ने अलग मकान ले लिया। मेधा की खुशियों की एक मात्र धुरी थी 'गुड़िया', जिसमें खोकर वह सारे गम भूल गई थी।

समय बीतता रहा। गुड़िया की पहली वर्ष गांठ भी आ पहुंची। मेघा कई दिन से तैयारियों में व्यस्त थी अपनी सास को वह स्वयं निमन्त्रण दे आई थी।

जन्म दिन की पार्टी शुरू हो गई। तोहफों के ढेर लग गए। "मां जी नहीं आईं अभी भी उनके दिल में..." मेधा आगे न कह पाई। शोक की एक लहर ने मेधा के चेहरे की मुस्कराहट धूमिल कर दी। राजीव और ऋचा उसे समझा रहे थे। इतने में ही मेधा ने जो अपनी आंखों से देखा एकबारगी उसे विश्वास न हुआ। हाथ में बंडल थामे परिवार के सदस्यों के साथ माता जी आती दिखाई दीं। □

छोटा परिवार

सुखी परिवार

केन्द्र के समाचार

गरीबी और बेरोजगारी मिटाना प्रमुख लक्ष्य

प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी ने नई दिल्ली में राष्ट्रीय विकास परिषद् को सम्बोधित करते हुए कहा कि हमें विकास दर बढ़ानी होगी। पिछले पांच वर्षों में इसका औसत चार प्रतिशत से कम रहा है। इसे बढ़ाकर सातवीं योजना में छह प्रतिशत करना होगा। छठी योजना में लगे पूंजी निवेश के अधिकांश भाग का जैसे कि बिजली, परिवहन और उर्वरकों के क्षेत्र में लाभ सातवीं योजना में मिलेगा। इन बातों को ध्यान में रखते हुए और अर्थव्यवस्था की वर्तमान स्थिति, साधनों की कमी, मुद्रास्फीति की रोकथाम की आवश्यकता को मद्देनजर रखते हुए योजना आयोग ने छठी योजना में अधिकतम संभव विकास दर लगभग 5.3 प्रतिशत स्वीकार की है। यह विकास दर प्राप्त की जा सकती है बल्कि यह करना ही होगा। इसके लिए बड़े पैमाने पर साधन जुटाने होंगे। योजना की रूप-रेखा में 90,000 करोड़ रु० से अधिक राशि हम रखना चाहते थे किन्तु हमें व्यावहारिकता की कसौटी रखनी होगी। इस विशाल पैमाने पर साधन जुटाने के लिए हमें विभिन्न प्रयास करने होंगे और ये प्रयास केन्द्र और राज्य दोनों को करने होंगे। उन्होंने कहा कि हम कृषि और औद्योगिक उत्पादन को बढ़ाने, सिंचाई और बिजली क्षमता का विस्तार करने तथा औद्योगिक आत्म-निर्भरता को दृढ़ करने, संचार और परिवहन व्यवस्था को सुधारने, ऊर्जा साधनों के विकास, न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम, ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम, निर्यात संवर्धन और कमजोर वर्गों की उत्पादन क्षमता को बढ़ाने वाले कार्यक्रमों को प्राथमिकता देंगे। परिवार नियोजन और कल्याण की उपेक्षा नहीं की जा सकती, पर यह स्वेच्छा पर आधारित कार्यक्रम होगा। प्रधानमंत्री ने कहा कि हमारे सामने विराट कार्य अर्थव्यवस्था को स्फूर्तिवान बनाना है। छठी योजना के विकास का रास्ता निर्धारित करना होगा और ऐसा पूंजी निवेश प्रेरित करना होगा जिससे हमें गरीबी और बेरोजगारी हटाने तथा आत्मनिर्भरता प्राप्त करने के प्रमुख लक्ष्य प्राप्त करने में मदद मिले। हम राज्य सरकारों से साझीदार बनने और परामर्श देने की ही अपेक्षा नहीं करते, इस प्रक्रिया को तेज करने में भी सहायता और सहयोग चाहते हैं। अन्तर्राष्ट्रीय वातावरण की चर्चा करते हुए प्रधानमंत्री ने कहा कि हम विकास-शील देशों के लिए हर नया दिन अधिक कठोर बनता जा रहा है। तेल संकट के कारण जिन देशों पर सबसे अधिक असर पड़ा है, हम उनमें से एक हैं। विश्वव्यापी मुद्रास्फीति के कारण हमारे पहले के अनुमान और आशाएं निरर्थक हो गई हैं।

वन कार्यक्रम को प्राथमिकता

प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी ने केन्द्रीय वन मण्डल की बैठक का समारंभ करते हुए कहा कि सामाजिक वन लगाने के कार्य-क्रम को अत्यधिक तात्कालिकता के साथ अपनाया जाए, तभी हमारे लिए वन-सम्पदा पर पड़ रहे दबाव को रोकना संभव होगा। उन्होंने कहा कि हमारे किसानों को वन अधिकारियों की देखरेख में वन लगाने का काम करना चाहिए। श्रीमती गांधी ने कहा कि शहरों के पास हरित पट्टियां होनी चाहिए। काम के बदले अनाज और अन्य कार्यक्रमों के अन्तर्गत भी वन रोपण का का कार्य हाथ में लिया जाना चाहिए। यह काम राष्ट्र व्यापी आधार पर एक विशाल जन-आन्दोलन के रूप में बहुत ही प्रभाव-शाली ढंग से किया जाना चाहिए और इसमें संस्थाओं का सहयोग लिया जाना चाहिए। लोगों में और हमारे युवकों में यह भावना जगाई जानी चाहिए कि वे जहां रहते हैं, जहां पढ़ते हैं, जहां काम करते हैं, अधिकाधिक पेड़ लगाएं। प्रधानमंत्री ने कहा कि इस बात में कोई संदेह नहीं कि वन सम्बन्धी अधिक व्यापक कानून की आवश्यकता है। जिससे कि वनों को चोरी-छिपे काटे जाने से रोका जा सके। इस तरह के कानूनों को बनाते समय संपूर्ण वनों का ध्यान रखना चाहिए। इसमें वनों में रहने वाले जीव-जन्तुओं, पशु-पक्षियों और वनस्पति-फूलों आदि का संरक्षण शामिल है। किन्तु केवल कानून बना देना काफी नहीं होगा। श्रीमती गांधी ने कहा कि सम्बन्धित अधिकारियों को बराबर इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि नियम और कानूनों का उल्लंघन न हो और जनता को वनों के बारे में शिक्षित करने तथा दोषियों को सजा देने पर पर्याप्त ध्यान दिया जाए। वनों से हमारे देश की अर्थव्यवस्था और यहां के लोगों का विकास जुड़ा हुआ है। संरक्षण और विकास में किसी प्रकार का पारस्परिक विरोध नहीं है। प्रधानमंत्री ने कहा कि हम कागज बनाने के कारखाने तथा वनों पर आधारित अन्य उद्योग स्थापित करके भी वनों को संरक्षित रख सकते हैं। उन्होंने इस बात पर जोर दिया कि वृक्षारोपण के लिए लोगों द्वारा व्यापक अभियान चलाया जाना चाहिए।

अपने स्वागत भाषण में केन्द्रीय कृषि मंत्री राव वीरेन्द्र सिंह ने कहा कि हाल ही के वर्षों में हमारे वन संसाधनों का बहुत अपव्यय हुआ है और वे इसी महत्वपूर्ण विषय की ओर बोर्ड का ध्यान दिलाना चाहते हैं। मंत्री महोदय ने कहा कि वनों के नाश के प्रति बढ़ती हुई चिन्ता के कारण ही प्रधानमंत्री के नेतृत्व में 1976 में वन और वन्य जीवन को भारतीय संविधान की समवर्ती सूची के अन्तर्गत लाने के लिए कदम उठाए गए। मंत्री महोदय ने कहा कि बढ़ती हुई आबादी के दबाव और ग्रामीण क्षेत्रों में लोगों की बढ़ती हुई संख्या की आवश्यकताओं को उप-लब्ध संसाधनों से पूरा करने के लिए यह आवश्यक है कि ग्रामीण विकास के ऐसे कार्यक्रमों और नीतियों का विकास किया जाए जिनसे इन परिस्थितियों पर काबू पाया जा सके।

छठी योजना में सिंचाई

केन्द्रीय सिंचाई मंत्री श्री केदार पांडे ने आकाशवाणी से अपने एक प्रसारण में

ताया कि 1980 से लेकर 1985 तक की जना अवधि में एक करोड़ पचास लाख क्टेयर अतिरिक्त भूमि पर सिंचाई की वस्था उपलब्ध कराई जाएगी। इतने बड़े ाम को पूरा करने के लिए अगले पांच वर्षों सिंचाई के लिए 15 हजार करोड़ रु० रखे ाएंगे ।

अपने प्रसारण में श्री पांडे ने आगे बताया क पानी के बढ़ते हुए महत्व को देखते हुए क राष्ट्रीय योजना को मंजूरी दी गई है जिसके न्तर्गत विभिन्न नदियों को जोड़ने तथा जल-ग्रह क्षमता को बढ़ाने का काम किया जाएगा। न्होंने कहा कि राष्ट्रीय योजना के अन्तर्गत हां सिंचाई की सुविधाएं बढ़ाने की बात ोची गई है वहां बाढ़ नियंत्रण और बिजली ा उत्पादन बढ़ाने का भी ध्यान रखा गया । इस महत्वाकांक्षी योजना का लाभ सभी ाज्यों और पड़ोसी देशों को होगा । श्री पांडे आगे कहा कि इस योजना को सफलतापूर्वक ागू करने के लिए एक स्वतंत्र संस्था के ूप में एक राष्ट्रीय सिंचाई निगम स्थापित रने का प्रस्ताव है ।

सिंचाई के जिन कार्यों को हाल ही में ंतिम रूप दिया गया है उनकी चर्चा करते हुए ्री पांडे ने कहा कि जमीन के अन्दर के ानी का अनुमान लगाने के लिए जो र्वेक्षण किया जा रहा है, उसे जल्दी पूरा किया जाएगा । भूमिगत जल का उपयोग पिछड़े और उन इलाकों में जरूरी हो जाता है, जहां प्रायः सूखा पड़ता है ।

श्री पांडे ने यह भी कहा कि वर्षा से ाप्त होने वाली विशाल जल राशि के सदुपयोग के लिए सिंचाई मंत्रालय अनेक प्रभावी उपाय कर रहा है । इसके लिए सरकारी विभागों, इंजीनियरों तथा वि-शेषज्ञों के साथ-साथ किसानों का सक्रिय सहयोग भी जरूरी है । इसी उद्देश्य से सरकारी विशेषज्ञों के साथ जन प्रतिनिधियों की एक सलाहकार समिति का गठन किया जाएगा । इससे सिंचाई, सूखा और बाढ़ नियंत्रण तथा जल राशि के समुचित उपयोग के प्रभावी कार्यक्रमों को लागू करने में सुविधा होगी ।

श्री पांडे ने कहा कि यह एक विचित्र तथ्य है कि भारत को जहां वर्षा के जल की विशाल प्राकृतिक देन उपलब्ध है वहां प्रकृति का यह वरदान ही असंतुलित होने पर अभिशाप बन जाता है। हमारे पूरे देश का एक-तिहाई भाग सूखे से प्रभावित रहता है तो दूसरी ओर करीब चार करोड़ हेक्टेयर भूमि को बाढ़ का भय बना रहता है ।

सिंचाई मंत्री ने कहा कि बाढ़ से क्षति के लिए कुछ हद तक हम भी जिम्मेदार हैं। जिन मैदानी इलाकों में बाढ़ का खतरा रहता है वहां नई बस्तियां बसा दी जाती हैं और उद्योग लगा दिए जाते हैं, जो उचित नहीं है । इसके अलावा नदी के जल ग्रहण क्षेत्रों में हम भारी संख्या में पेड़ों को काट देते हैं । उन्होंने कहा कि बाढ़ की रोकथाम के लिए नदी के मैदानी इलाकों का योजनाबद्ध तरीके से विकास करना होगा। पर्वतीय क्षेत्रों में भी जहां से नदियां निकलती हैं, वृक्षारोपण का एक व्यापक अभियान चलाना होगा ।

सहकारिता और अनुसूचित वर्ग

राज्य स्तर पर कार्य करने वाले आदिवासी विकास सहकारी निगम आदिवासियों के शोषण को खत्म करने के लिए बृहद कृषि बहुद्देश्यीय सहकारिता समितियों को अपनी सेवाएं प्रदान करेंगे । इन सेवाओं के तहत उन्हें अल्प, मध्यम और दीर्घावधि के कृषि ऋण और बीज, कृषि औजारों, उर्वरकों आदि की सप्लाई तथा कृषि उपज और छोटे-मोटे वन उत्पादों के संसाधन और विपणन और आवश्यक उपभोक्ता वस्तुओं के वितरण की व्यवस्था की जाएगी । बहुद्देश्यीय समितियां विभिन्न राज्यों के आदिवासी बहुल क्षेत्रों में सभी आदिवासी परिवारों को सदस्य बनाने की कोशिश करेंगी । सभी आदिवासी परिवार बहुद्देश्यीय समितियों के सदस्य होंगे। राष्ट्रीय सहकारी विकास निगम द्वारा दिल्ली में आयोजित एक द्वि-दिवसीय सम्मेलन में यह निर्णय लिया गया ।

सम्मेलन में एक महत्वपूर्ण सिफारिश यह की गई थी कि भारतीय रिजर्व बैंक की विशिष्ट व्याज दर योजना के तहत आदि-वासियों के अतिरिक्त आदिवासी विकास सहकारी निगमों तथा बृहद कृषि बहू-द्देश्यीय सहकारिता समितियों को अधिका-धिक धन दिया जाए । इस प्रकार ब्याज का भार कम होने से ये समितियां अपनी गति-विधियों में तेजी ला सकती हैं तथा अपने सदस्यों को लाभ पहुंचा सकती हैं।

सम्मेलन में हुए विचार-विमर्श का एक महत्वपूर्ण परिणाम यह भी हुआ कि राज्यों में उपलब्ध उन विभिन्न वन उत्पादों का पता लगाया गया जिनकी या तो देश के भीतर बिक्री की जा सकती है या जिनका निर्यात किया जा सकता है । राष्ट्रीय कृषि सहकारी विपणन संघ इस प्रयास में सहायता करेगा और विपणन सम्बन्धी जानकारी प्रदान करेगा। राष्ट्रीय सहकारी विकास निगम, आदिवासी विकास सहकारी निगमों और कृषि बहू-द्देशीय सहकारी समितियों की गतिविधियों में तेजी लाने के लिए उन्हें बड़े पैमाने पर आर्थिक सहायता प्रदान करेगा । राष्ट्रीय सहकारी विकास निगम द्वारा विभिन्न समितियों के लिए अब तक लगभग 13 करोड़ रुपये मंजूर किए जा चुके हैं।

यह सुझाव भी दिया गया कि आदिवासी क्षेत्रों में आदिवासियों को छोटे-मोटे वन उत्पादों के बदले आवश्यक उपयोगी वस्तुएं उपलब्ध कराने के लिए भ्रमणशील उपभोक्ता दुकानें खोली जानी चाहिए ।

देज भर में फैले अनुसूचित जातियों के सामाजिक उत्थान के लिए राज्यों को, मात्र अनुसूचित जातियों की या अनुसूचित जाति प्रधान समितियों का पता लगाने के लिए कहा गया। यह सुझाव भी था कि मत्स्यपालन, मुर्गीपालन, बुनाई, रेशम उद्योग और दुग्ध उत्पादन में लगे अनुसूचित जाति के लोगों के लिए नई सहकारी समितियों का गठन किया जाना चाहिए ।

देहाती क्षेत्रों में रोजगार के अवसर

ग्रामीण रोजगार के अवसर पैदा करने के लिए ग्रामीण पुनर्निर्माण मंत्रालय सम-न्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम, काम के बदले अनाज कार्यक्रम, सूखा बहुल क्षेत्र कार्यक्रम, मरूक्षेत्र विकास कार्यक्रम जैसी योजनाओं को लागू कर रहा है। समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम के प्रत्येक खंड में ऐसे 400 परिवारों का निर्धारण किया जाता है और एक वर्ष के भीतर उन्हें गरीबी की रेखा से ऊपर लाने के लिए सहायता दी जाती है। इससे अलग खंडों में प्रति वर्ष गांव के 40 युवकों को देहाती क्षेत्रों के लिए महत्व रखने वाले तकनीकी कामों का प्रशिक्षण दिया जाता है । उन्हें अपने काम चलाने

के लिए अन्य प्रकार की सहायता भी दी जाती है जिससे उन्हें एक महीने में कम से कम 300 रु० की आय हो सके।

समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम लघु कृषक विकास एजेंसी, सूखा बहुल क्षेत्र. कार्यक्रम और कमान क्षेत्र विकास क्षेत्रों के 2000 खंडों में और इन एजेंसियों के क्षेत्र से बाहर 900 खंडों में चलाया जा रहा रहा है। प्रति वर्ष 300 नए खंडों को इस कार्यक्रम के अन्तर्गत लाकर इस कार्यक्रम का विस्तार किया जा रहा है। ग्रामीण विकास कार्यक्रमों के अन्तर्गत रोजगार पैदा करने के सम्बन्ध में मानक निर्धारित करने के उद्देश्य से सितम्बर के मध्य में दो दिन की एक कार्यशाला का आयोजन किया गया।

गारे से बने मकान

गारे से बने मकानों की दीवारों को भारी वर्षा के कटाव से बचाने के लिए दो साधारण और सस्ती तकनीकों का विकास किया गया है। पहली तकनीक का विकास राष्ट्रीय भवन संगठन ने किया है।

इसमें भूसा और गोबर के मिश्रण से बने साधारण गारे में डामर को मिलाकर प्लास्टर बनाया जाता है और इसका कच्ची दीवार पर लेप किया जाता है। दूसरी तकनीक का विकास केन्द्रीय भवन अनुसन्धान संस्थान ने मिट्टी के तेल में कोलतार के घोल को मिलाकर स्प्रे के रूप में किया है और इसको साधारण स्प्रे पम्प की सहायता से कच्ची दीवारों पर छिडका जाता है।

फूस के छप्परों को शीघ्र खराब होने और आग से बचाने के लिए भी एक तकनीक का विकास किया गया है। छप्परों पर डामर और गोबर के प्लास्टर का लेप करके उसे जल्दी आग पकड़ने से बचाया जा सकता है। ग्रामीण क्षेत्रों में प्रत्येक चार मकानों में से तीन मकान मिट्टी की दीवार और फूस के बने हुए हैं। भारी वर्षा और बाढ़ के कारण ऐसे मकानों की काफी क्षति और बरबादी होती है, जिसकी वजह से लाखों लोगों को कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। जब तक गरीब ग्रामीण पक्का मकान बनाने की स्थिति में नहीं हो पाते तब तक यह जरूरी है कि इस प्रकार की तकनीकें अपनाई जाएं ताकि कच्ची दीवारों और फूस के छप्परों वाले मकानों को सुरक्षित रखा जा सके।

निर्माण और आवास मंत्रालय के राष्ट्रीय भवन संगठन ने ग्रामीण लोगों को नई विकसित तकनीकों के बारे में शिक्षित करने के लिए पुस्तिकाओं का प्रकाशन किया है। चंडीगढ़, बंगलौर, वल्लभ विद्यानगर (गुजरात), शिवपुर (हावड़ा), नई दिल्ली, जोधपुर, श्रीनगर, त्रिवेन्द्रम और वाराणसी स्थित अपने क्षेत्रीय आवास प्रभागों के जरिये संगठन ग्रामीण लोगों को इनका प्रदर्शन कर रहा है।

लघु उद्योग

लघु उद्योगों के विकास को ध्यान में रखते हुए सरकार ने अति लघु और लघु इकाइयों की निवेश सीमा बढ़ा दी है। अब यह सीमा अति लघु इकाई में एक लाख रु० से बढ़ाकर दो लाख रु० और लघु इकाइयों में 10 लाख रु० से बढ़ाकर 20 लाख रु० कर दी गई है। पिछले पांच वर्षों में कीमतों में भारी बढ़ोतरी होने के कारण यह कदम उठाया गया। इस का एक अच्छा परिणाम यह भी होगा कि अब बहुत टेक्नालाजी प्रधान इकाइयां भी लघु उद्यो की सीमा में आ जाएंगी।

कर्ज की योजना

कमजोर वर्ग के भी बहुत ही गरी लोगों को कर्ज देने के लिए सार्वजनिक क्षे के बैंकों ने एक योजना चला रखी है। गां में जिन परिवारों की आय 2000 रु सालाना, शहरों में 3000 रु० सालाना या जिनके पास एक एकड़ से कम सिंचा वाली या 2.5 एकड़ से कम बिना सिंचा वाली भूमि हो, उन परिवारों को इस योजन के तहत कर्ज दिया जाता है। इस योजन में चार प्रतिशत दर पर छोटे उत्पादन ऋ दिए जाते हैं। दिसम्बर, 1979 तक ऐ 19 लाख परिवारों को 124 करोड़ रु का कर्ज दिया जा चुका है। इस कर्ज में 42 प्रतिशत कर्ज अनुसूचित जाति के परिवार को दिया गया।

स्वास्थ्य सेवक

देश के हर गांव में 1982-83 तक अपन सामुदायिक स्वास्थ्य सेवक हो जाएगा सामुदायिक स्वास्थ्य सेवक योजना क विस्तार गंदी बस्तियों में भी किया जाएगा इस योजना का उद्देश्य 'अपना स्वास्थ्य अपने हाथ में' है। जून, 1980 तक कुल मिलाक 1,45,139 सामुदायिक स्वास्थ्य सेवक को प्रशिक्षण दिया गया है। ये सेवक गां के लोगों की आम बीमारियों का इला करते हैं। स्वास्थ्य सेवक लोगों और प्राथमि स्वास्थ्य केन्द्रों के बीच एक कड़ी होता है और वह छोटे परिवार का संदेश भी लोगों तक पहुंचाता है। □

[पृष्ठ 17 का शेष]

सरकार ग्रामीण विकास के मद में आबंटित राशि का एक बड़ा भाग महिलाओं की समस्याओं को हल करने में खर्च कर रही है। सरकारी तंत्र की शिथिलता, अपने अधिकार की मांग करने के प्रति उदासीनता, सरकारी व्यवस्था को सहयोग देने के अभाव में ये योजनाएं अपने लक्ष्य की सिद्धि नहीं कर पातीं। फलतः ग्रामीण महिलाओं की अधिकांश समस्याएं नासूर बनकर आजीवन उन्हें पीड़ित करती रहती हैं। डाक-तार विभाग में महिलाएं नियुक्त हैं ताकि वे ग्रामीण महिलाओं से बचत की राशि प्रत्येक मास लाकर उनके खाते में जमा कर दें, पर उन्हें न तो उन पर भरोसा है और न स्वयं निकटस्थ डाकघरों में जा सकती हैं। उन्हें सरकारी व्यवस्था पर विश्वास करना होगा और उसे भरपूर सहयोग देना होगा, तभी ग्रामीण महिलाओं की समस्याएं सुलझेंगी और "सर्वे भवन्तु सुखिनः, सर्वे सन्तु निरामयः" की वाणी चरितार्थ होगी। □

साहित्य समीक्षा

समाज कल्याण (अगस्त-सितम्बर अंक) : सम्पादक: राकेश जैन, प्रकाशक : केन्द्रीय समाज कल्याण बोर्ड, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या : 108, मूल्य : 3 रु० ।

केरल के प्रसिद्ध त्यौहार 'ग्रोणम' के उपलक्ष्य में प्रकाशित समाज कल्याण' के अगस्त-सितम्बर विशेषांक में सुदूर दक्षिण के इस तटीय राज्य के सामाजिक, सांस्कृतिक ग्रौर ग्रार्थिक पहलुग्रों पर प्रकाश डाला गया है ।

केरल की जनता ने धर्म निरपेक्षता, जागरूकता ग्रौर उच्च शैक्षणिक सुविधाग्रों के कारण देश में एक विशिष्ट स्थान बना लिया है। पत्रिका के समीक्ष्य ग्रंक में इस प्रदेश में प्रौढ़ शिक्षा, हरिजन कल्याण, स्त्री-शिक्षा, स्वास्थ्य सेवा ग्रादि क्षेत्रों में किए गए प्रयासों ग्रौर उपलब्धि के विषय में सूचनाप्रद लेख हैं । साथ ही केरल की सांस्कृतिक विरासत ग्रौर नैसर्गिक सौंदर्य का भी उल्लेख है ।

केरल ही ऐसा प्रदेश है जहां के निवासियों में धर्म का वैभिन्य होते हुए भी साम्प्रदायिक सह-ग्रस्तित्व की भावना सबसे ग्रधिक है। साक्षरता के क्षेत्र में इस राज्य का स्थान सबसे ग्रागे है। कदाचित यही कारण है कि यह मलयाली भाषी राज्य परस्पर धार्मिक भेदभाव को मिटाकर "जिग्रो ग्रौर जीने दो" के सिद्धान्त को ग्रात्मसात कर देश में ग्रपना स्थान बना पाया। पत्रिका के इस विशेषांक में ऐसे कई शिक्षाप्रद ग्रौर जानकारी से भरपूर लेख प्रकाशित किए गए हैं, जिन्हें मूल रूप से केरल के ही लेखकों ने लिखा है।

केरल के प्राकृतिक सौंदर्य से प्रभावित होकर महाकवि दिनकर द्वारा ये बोल मुखरित हुए :—

किसको नमन करूं मैं केरल....
तुझको या तेरे नदीश, गिरि
वन को नमन करूं मैं ।

पत्रिका का हरित ग्रामुख ग्राकर्षक है। इसमें न केवल रोचक लेख ही हैं बल्कि केरल के साहित्यकारों की रचनाएं भी प्रस्तुत की गई हैं जिससे पाठकों को मलयाली कथा शैली का सरासरी परिचय प्राप्त हो सके। कुल मिलाकर यह विशेषांक एक बहुत सफल प्रयास है ।

सनत कुमार शर्मा

धरती पुत्र (नाटक) : लेखक : गोपाल दत्त आचार्य, प्रकाशक : कादम्बरी प्रकाशन, सुदर्शन पार्क, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या : 55, मूल्य : 10 रु० ।

यह नाटक लघु होते हुए भी ग्रपने ग्राप में सम्पूर्ण है। इसमें एक साधारण ग्रामीण वातावरण में जमींदाराना हथकण्डों ग्रौर छोटे किसानों की ग्रार्थिक विवशता के सामाजिक टकराव का प्रभावी वर्णन है। नाटक का विषय नया नहीं, लेकिन यह भी सही है कि इस विषय पर ऐसी रचनाएं बहुत कम देखने को मिलती हैं ।

ग्रामीण समाज के दो विपरीत वर्गों के ग्रापसी उलझाव से जो नाटकीयता पैदा की गई है उसे सुबोध शैली में प्रस्तुत किया गया है। गणेश का चरित्र इस बात का प्रतीक है कि एक ही समाज में वर्गीय खींचातानी या बदले की भावना से ऊंच-नीच की खाई नहीं पाटी जा सकती । ग्रहिंसा ग्रौर भाईचारे से ही सामाजिक समस्याग्रों को खत्म किया जा सकता है ।

नाटक साधारण तकनीक के साथ रचा गया है ग्रौर बगैर किसी उलझन के इसे मंच पर प्रस्तुत किया जा सकता है।

राम प्रकाश राही

टूटती सीमाएं : लेखिका : राजरानी पारिक, प्रकाशक : राजपाल एंड संस, कश्मीरी गेट, दिल्ला, पृष्ठ संख्या : 118, मूल्य 12 रु० ।

प्रस्तुत उपन्यास 'टूटती सीमाएं,' में पारिवारिक संबंधों की विसंगतियों, खोखलेपन ग्रौर प्रेम-विवाह के कारण टूटते-जुड़ते संबधों का चित्रण किया गया है ।

भुवन ग्रपने परिवार की ग्रार्थिक स्थिति के कारण ग्रपने मामा के पास रहने लगता है ग्रौर वहां ग्रपने खर्चे का किसी तरह जुगाड़ कर ग्रागे पढ़ता है। बीच में कम दहेज लाने के कारण प्रताड़ित की जाने वाली ग्रपनी बहन सुशीला को भी वह ग्रपने साथ ले जाता है । भुवन विश्वविद्यालय छात्र संघ के चुनाव में जीत जाता है, पर निहित स्वार्थों से समझौता नहीं करता । उसके जीवन में भावना ग्राती है ग्रौर दोनों विवाह सूत्र में बंध जाते हैं। लेकिन बड़े घर की लड़की भावना के सामने उसमें हीन भावना बनी रहती है ग्रौर वह एक दिन घर छोड़कर चुपचाप जाता है ग्रौर फिर चुपचाप लौट ग्राता है ।

ग्रार्थिक ग्रौर सामाजिक ग्रसमानता में जूझते हुए लोगों का चित्रण इस उपन्यास में हुग्रा है। इस ग्रसमानता के कारण व्यक्ति टूटता है ग्रौर जुड़ता है। उपन्यास रोचक है।

नटखट चाची : लेखक : अमृतलाल नागर, प्रकाशक: राजपाल एंड संस, कश्मीरी गेट, दिल्ली, पृष्ठ संख्या : 36, मूल्य : 5 रु० ।

सुप्रसिद्ध कथाकार श्री अमृतलाल नागर की 'नटखट चाची' पुस्तक में 5 रोचक और सरस कहानियां हैं। बच्चों के लिए लिखी गई ये कहानियां मात्र मनोरंजन के लिए ही नहीं हैं बल्कि उनका ज्ञानवर्द्धन करने में भी सहायक हैं।

'नटखट चाची' में उस चाची का किस्सा बयान है जो घर के भीतर शेर बनी रहती है और दूसरी तरफ डरपोक। इसी डर के कारण चाची, चाचा और बच्चों की बड़ी दुर्गति होती है। 'जमींदार बाबू' धर्म पर जान देते थे, लेकिन धर्म के डर से उनकी जान भी जाती थी। 'अमृतलाल नागर बैंक लिमिटेड' में बड़ों की देखादेखी बच्चों में भी कुछ करने का उत्साह जाग उठता है पर दादा जी के आगे सारा जोश जाता रहता है।

'लिटिल रेड इजीप्शिया' अंग्रेजी के कमाल पर है। छोटेलाल मिश्रा छठी कक्षा का छात्र है। अंग्रेजी में वह अपना नाम 'लिटिल रेड इजीप्शिया' बताता है।

संग्रह की सभी कहानियां किशोरों और नवसाक्षरों के लिए भी उपयोगी हैं। सरल भाषा में रोचक ढंग से ये कहानियां लिखी गई हैं।

देवेन्द्र उपाध्याय

[पृष्ठ 11 का शेष]

इसलिए नेहरूजी मिश्रित अर्थव्यवस्था के कट्टर हिमायती थे, जिससे अंततोगत्वा सार्वजनिक क्षेत्र का आधिपत्य होगा। उनके सामने पश्चिम, सोवियत संघ और जापान के औद्योगीकरण का प्रभाव था। वे औद्योगीकरण का सही लाभ उठाना चाहते थे पर उनके अंतरों और दुर्गुणों से बचना चाहते थे। इसलिए वे गांवों को स्वावलम्बी इकाई बनाने के प्रबल हिमायती थे। सहकारी खेती को शक्तिशाली माध्यम मानते थे।

नेहरूजी ने लम्बे समय तक भारत का नेतृत्व किया। यद्यपि उनके विचार क्रांतिकारी थे किन्तु उनके कार्यान्वियन में उन्होंने व्यावहारिक नीति अपनाई। आजादी के बाद 15-16 वर्षों में जिस तरह उन्होंने भारत को आर्थिक मार्ग कर लोकतांत्रिक ढंग से बढ़ाया वह दुनिया के इतिहास में बेमिसाल है। जीवन के अंतिम दिनों में उन्हें इस बात का गहरा रंज था कि औसत आदमी के लिए आजादी का विशेष लाभ नहीं मिल सका है। उसका जीवन स्तर बढ़ने के बजाय मूल्य स्तर ही बढ़े हैं। यह उनकी खूबी थी कि इस सत्य को उन्होंने बेझिझक स्वीकार किया।

एक राजनेता के रूप में न केवल उन्होंने देश को मजबूत शासन दिया, वरन आर्थिक रूप से देश को ठोस आधार भी दिया। उनके कार्यकाल में देश आर्थिक मार्ग पर बढ़ा। सार्वजनिक क्षेत्र की बुनियाद कायम हुई और वह क्षेत्र आज भारतीय अर्थव्यवस्था का एक महत्वपूर्ण अंग बन गया है। नेहरूजी को श्रेय है कि उन्होंने देश को विचारधाराओं के संघर्ष से बचाकर आर्थिक निर्माण की राह पर अग्रसर किया। यही उनकी सबसे बड़ी खूबी थी।

वस्तुतः राष्ट्र के विकास का जो भी ढांचा है और देश में जो प्रगति हुई है उसका सब श्रेय नेहरूजी की नीतियों और उनकी योजनाओं को है। वे समाजवाद के प्रखर हिमायती थे—परन्तु उनका समाजवादी ख्याल हर दीन के आंख के आंसू नहीं पोंछ सका। परन्तु इसके बावजूद वे इस युग और आधुनिक इतिहास की अप्रतिम हस्ती थे जिन्होंने हिन्दुस्तान को रहने के लिए बेहतर देश बनाया और देशवासी का माथा ऊपर उठाया। □

[पृष्ठ 9 का शेष]

रहे। इन निर्बल वर्गों की समस्याओं के निदानार्थ विकास कार्यक्रमों में कृषि के साथ-साथ ग्रामीण उद्योगों को समान महत्व दिया जाना चाहिए और कृषि विकासार्थ विनियोजित मुद्रा के अनुरूप ही ग्रामीण उद्योगों पर भी व्यय किया जाना चाहिए। आज आवश्यकता इस बात की है कि वर्तमान कुटीर उद्योगों का सघन विकास किया जाए और आधुनिक आवश्यकताओं के अनुरूप ही वस्तुओं का उत्पादन करने वाले नवीन कुटीर उद्योगों को विकसित किया जाए। साथ ही साथ यह भी आवश्यक है कि उपभोक्ताओं की रुचि कुटीर और लघु उद्योगों के उत्पादनों के उपयोग की ओर उन्मुख हो ताकि मांग के अभाव में कुटीर उद्योगों का विकास मार्ग अवरुद्ध न हो जाए। कुटीर उद्योगों के सघन विकास के अभाव में बहुसंख्यक निर्धन ग्रामीण जनसंख्या आकाशवृत्ति की स्थिति में ही बनी रहेगी। □

मिलटोन के लिए गीले प्रोटीन तत्वों का संग्रहण

गरीबों का दूध मिलटोन

हमारे देश में आम आदमी के स्वास्थ्य को प्रभावित करने वाली गरीबी जन्य एक प्रमुख समस्या है अल्प-पोषण और कुपोषण। भारत सरकार का खाद्य और पोषण बोर्ड कम कीमत के पोषक खाद्य और पेय पदार्थ तैयार करके इस समस्या से जूझने में लगा हुआ है। अल्प-पोषण और कुपोषण के विरुद्ध संघर्ष का ही परिणाम है बोर्ड द्वारा तैयार किया गया दूध की तरह का एक पेय, जिसका नाम है मिलटोन।

हालांकि हमारे भोजन में दूध का महत्वपूर्ण स्थान है, किन्तु देश में प्रति व्यक्ति प्रतिदिन दूध की खपत लगभग 100 ग्राम है। दूध की ज्यादातर खपत शहरों के समृद्ध परिवारों में होती है। गरीबों को तो दूध मुश्किल से ही मुअस्सर होता है। हमारे समाज के कमजोर वर्गों के लिए दूध के अभाव की पूर्ति में मिलटोन एक वरदान सिद्ध हो सकता है। इसे गरीबों का दूध भी कह सकते हैं। यह ताजे दूध में मूंगफली चूर्ण से अलग किए गए पोषक प्रोटीन तत्वों को मिलाकर तैयार किया जाता है।

मिलटोन का उत्पादन केन्द्रीय खाद्य प्रौद्योगिकी अनुसंधान संस्थान, मैसूर द्वारा विकसित प्रक्रिया पर आधारित है। जहां तक पोषक तत्वों का प्रश्न है, यह बिल्कुल डेयरी के दूध की तरह है और इसको चाय, काफी, दही, लस्सी आदि बनाने में बखूबी इस्तेमाल किया जा सकता है। जहां तक कीमत का प्रश्न है यह दूध से कहीं सस्ता है।

फिलहाल मिलटोन का उत्पादन बंगलौर और हैदराबाद में हो रहा है, जहां यह खाद्य और पोषण बोर्ड द्वारा सम्बद्ध राज्य सरकारों और डेयरी विकास निगम के सहयोग से बनाया जाता है। पिछले वर्ष 25 लाख लीटर से अधिक मिलटोन का उत्पादन हुआ था। अब कानपुर, रांची और कलकत्ता में यूनिसेफ की सहायता से इसके संयंत्र स्थापित किए जा रहे हैं और बंगलौर तथा हैदराबाद के संयंत्रों की वर्तमान उत्पादन क्षमता बढ़ाई जा रही है।

मिलटोन फिलहाल विशिष्ट पोषाहार कार्यक्रम और दोपहर का भोजन कार्यक्रम आदि प्रायोजित आहार कार्यक्रमों में इस्तेमाल किया जा रहा है। अब प्रयास किए जा रहे हैं कि मिलटोन अधिक से अधिक मात्रा में हमारे कम आय, निर्धन और कमजोर वर्गों के लोगों को मुहैया हो सके। □

RN 708/57
P&T Regd. No. D(D)98
Licenced Under U (D)-55 to
post without pre-payment at Civil Lines Post Office, Delhi

उन्नत तरीकों से खेती की पैदावार में बढ़ोतरी

निदेशक, प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नई दिल्ली-110001 द्वारा
प्रकाशित तथा प्रबन्धक, भारत सरकार मुद्रणालय, फरीदाबाद द्वारा मुद्रित।